04_radhaballav_Layout 1 6/3/2015 4:36 PM Page 69

अर्थशास्त्र : हमारे पास, हमसे दूर

एक लोकोपकारी शास्त्र की विवेचना

राधावल्लभ त्रिपाठी

श्याम शास्त्री द्वारा सम्पादित और अनूदित ***अर्थशास्त्र*** *का आवरण चित्र.*

भारतीय चिंतन-परम्परा में जीवन की तीन दिशाएँ मानी गयी हैं : धर्म, अर्थ और काम। इन तीनों को त्रिवर्ग कहा गया है और इनका विमर्श *धर्मशास्त्र, अर्थशास्त्र* और *कामशास्त्र* में किया जाता रहा है। इन तीनों में अविरोध और परस्परपूरकता भी देखी जाती रही है, इस सीमा तक कि एक के बिना दूसरे का होना असम्भाव्य कहा गया। इसीलिए जब इन तीनों के शास्त्रों— *धर्मशास्त्र, अर्थशास्त्र* और *कामशास्त्र*— की परम्पराओं का संधान किया गया तो माना गया

04_radhaballav_Layout 1 6/3/2015 4:36 PM Page 70

कि मूलत: तीनों शास्त्र एक ही थे। *महाभारत* में कहा गया कि ब्रह्मा समेकित त्रिवर्गशास्त्र के प्रणेता हैं, जिसका संक्षेप शंकर ने *वैशालाक्ष* नामक ग्रंथ में किया।[1] बाद में तीनों पर अलग-अलग ग्रंथ लिखे जाने लगे। *अर्थशास्त्र* पर स्वतंत्र ग्रंथ लिखने वाले आचार्यों में बृहस्पति, उशना और नारद के नाम गिनाए जाते रहे हैं। नारद का दूसरा नाम पिशुन भी है। पिशुन के *अर्थशास्त्र* के अनेक वचन *रामायण* तथा *महाभारत* में मिलते हैं। *महाभारत* में ही भारद्वाज के राजशास्त्र का भी उल्लेख मिलता है। भारद्वाज बृहस्पति के पुत्र कहे गये हैं। इनके भूतवादी या पदार्थवादी दर्शन का विस्तृत प्रतिपादन *महाभारत* में शांतिपर्व के तीन अध्यायों (186, 188, 190) में किया गया है। ये भारद्वाज ही *महाभारत* में कणिकनीति के नाम से प्रतिपादित राजशास्त्र के भी आचार्य हैं।[2] वे धृतराष्ट्र को बताते हैं कि किस तरह अग्न्याधान, यज्ञ, काषाय तथा जटाजिन द्वारा पुरोहित राजा को और लोगों को भेड़ियों की तरह लूट रहे हैं।[3]

कौटिल्य ने अपने ग्रंथ में इस समग्र परम्परा के परिप्रेक्ष्य में *अर्थशास्त्र* का पुनर्विन्यास किया। *महाभारत* में *अर्थशास्त्र* या राजधर्म नामक शास्त्र के अनेक आचार्यों को उद्धृत करते हुए जिस परम्परा का निरूपण है, उसे भी कौटिल्य ने संदर्भित किया है। अवधेय है कि आजकल जिसे इकॉनॉमिक्स कहा जाता है, प्रस्तुत लेख में उसके अर्थ में *अर्थशास्त्र* शब्द का प्रयोग नहीं किया जा रहा है। इकॉनॉमिक्स इस अ*र्थशास्त्र* का एक अंग अवश्य है।

राम और भीष्म : *अर्थशास्त्र* की प्राचीन परम्परा

रामायण में भरत राम से मिलने चित्रकूट जाते हैं। राम उनसे कुशल प्रश्न करते हैं। इन कुशल प्रश्नों में लगभग पचास सवाल हैं, जिनमें प्रशासन व प्रबंधन के बारे में प्राचीन भारतीय चिंतन-परम्परा की भी झलक मिलती है।[4]

राम भरत से पूछते हैं :

> भैया, तुम अपने विनयसम्पन्न, कुलीन, ज्ञानी, द्वेषरहित व शास्त्रदृष्टि से सम्पन्न पुरोहितजी का तो बराबर सम्मान करते हो न? अच्छे अस्त्रों व बाणों से लैस रहने वाले और अ*र्थशास्त्र* में विशारद उपाध्याय सुधन्वा को तो तुम पूरा सम्मान देते हो न? तुमने अपने ही जैसे, ज्ञानी, जितेंद्रिय, कुलीन तथा संकेत समझने वाले व्यक्तियों को ही मंत्री बनाया है न? क्यों कि हे राघव, मंत्रधारी और शास्त्रों के अच्छे जानकार अमात्यों के साथ की गयी मंत्रणा ही विजय का मूल है।
>
> तुम सोते तो नहीं रहते? समय पर तो जाग जाते हो न? ढलती रात में तुम अर्थ की व्यवस्था को ले कर सोच-विचार तो करते हो न? तुम अकेले तो मंत्रणा नहीं करते? कहीं बहुत से लोगों से तो मंत्रणा नहीं करते? मंत्रणा से निकले तुम्हारे विधानों से कहीं राष्ट्र की क्षति तो नहीं होती? तुम्हारे न कहे गये आशयों को तुम्हारे मंत्रीगण और मंत्रियों के न कहे आशयों को तुम तर्क और युक्ति द्वारा समझ तो जाते हो न? राजा सहस्रों मूर्खों की संगत करे या करोड़ों की— उनसे सहायता नहीं मिलने वाली ..., एक ही मेधावी, शूर, दक्ष और विचक्षण अमात्य राजा या राजपुत्र को महती लक्ष्मी तक पहुँचा देता है। तुम घूस न लेने वाले, हमारे पिता और पितामह के समय से काम करते आ रहे, पवित्र और श्रेष्ठों में भी श्रेष्ठ अमात्यों को काम पर तो लगाए रहते हो न?
>
> ... तुम बलवान, प्रधान, युद्ध में विशारद, जिनका पराक्रम परखा जा चुका और जो पराक्रम दिखा चुके— ऐसे सैनिकों को तुम सत्कार करके सम्मानित तो करते हो न? तुम अपनी सेना के सैनिकों को समय पर पगार तो दे देते हो न? इसमें विलम्ब तो नहीं करते? सैनिकों को पगार देने में विलम्ब होने पर वे अपने मालिक से चिढ़ जाते हैं, और यही महान अनर्थ होता है।

---

[1] *महाभारत,* शांतिपर्व 58.89,90.

[2] वही, आदिपर्व, अध्याय 40, शांतिपर्व, मुम्बई सं. अ. 140.

[3] वही, 140.19.

[4] *रामायण,* 2.94.2-59.

04_radhaballav_Layout 1 6/3/2015 4:36 PM Page 71

... तुम लोकायतिक ब्राह्मणों की बातों में तो नहीं आ जाते? भैया, ये लोग अपने आप को बड़ा पण्डित समझते हैं, पर ये सत्यानाश कराने में कुशल होते हैं। जब मुख्य धर्मशास्त्र विद्यमान हैं, तो ये लोग अपनी आन्वीक्षिकी बुद्धि से कुछ तो भी बकते रहते हैं।

... हमारे वीर पुरखों की बसाई, अयोध्या, इस नाम को चरितार्थ करने वाली, मज़बूत द्वारों वाली, हाथियों, अश्वों और रथों से भरी, अपने अपने कामों में लगे जितेंद्रिय, महोत्साही ब्राह्मणों, क्षत्रियों और वैश्यों से परिपूर्ण, तरह तरह की हवेलियों से घिरी, वैद्यों से भरी हुई, समुन्नत विशाल अयोध्या नगरी की तुम अच्छी तरह रक्षा करते आ रहे हो न? ... सैंकड़ों चैत्यों से युक्त, अच्छी बसाहट वाले, देवस्थान, प्याउओं और तालाबों से शोभित, ख़ूब प्रसन्न रहने वाले स्त्रियों और पुरुषों से भरे, समाजों और उत्सवों से शोभित, बँधी हुई सीमाओं वाले, पशुधन से युक्त, हिंसारहित, अदेवमातृक (जहाँ खेती केवल वर्षा पर अवलम्बित न हो), रम्य, हिंसक पशुओं से रहित तुम्हारे जनपदों में अमन-चैन तो है न? कृषि और पशुपालन से पेट पालने वाले सामान्य जनों पर तुम्हारा प्रेम तो बना हुआ है न? वे सब सुखी तो हैं न? उनकी रक्षा और भरण तुम सही सही करते आ रहे हो? राजा को चाहिए कि अपनी प्रजा के सब लोगों की धर्मपूर्वक रक्षा करे। स्त्रियों को दिलासा देते रहते हो? तुम्हारे राज्य में स्त्रियाँ सुरक्षित तो हैं? तुम उन पर विश्वास तो नहीं कर लेते, उन्हें गोपनीय बातें तो नहीं बता देते?

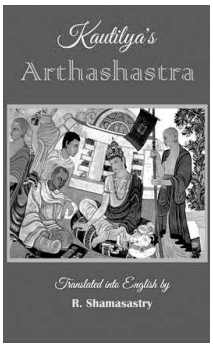

अर्थशास्त्र का पहला संस्करण शाम शास्त्री ने 1905 में *इंडियन एंटीक्वेरी* में अंग्रेज़ी अनुवाद के साथ प्रकाशित किया। 1909 में शाम शास्त्री का संस्करण पुस्तकाकार भी छपा। ... *अर्थशास्त्र* पर स्वतंत्र ग्रंथ लिखने वाले आचार्यों में बृहस्पति, उशना और नारद के नाम गिनाए जाते रहे हैं। नारद का दूसरा नाम पिशुन भी है। पिशुन के *अर्थशास्त्र* के अनेक वचन *रामायण* तथा *महाभारत* में मिलते हैं। ... कौटिल्य ने अपने ग्रंथ में इस समग्र परम्परा के परिप्रेक्ष्य में *अर्थशास्त्र* का पुनर्विन्यास किया। ■

राम के बाक़ी के कुशल प्रश्न दुर्ग, कोश, चोरों या अपराधियों को दण्ड, बूढों और बच्चों की रक्षा, साम, दाम, दण्ड और भेद के प्रयोग आदि को ले कर हैं। राम की प्रश्नावली का यह पूरा प्रसंग ही प्राचीन भारतीय साहित्य में अद्‌भुत है। इन प्रश्नों में राम का अयोध्या के प्रति प्रेम, राज्य-प्रबंध को ले कर उनकी चिंता, प्रशासन में उनकी सूक्ष्म बुद्धि व चतुराई प्रकट हुई है। सबसे बड़ी बात इन प्रश्नों के विषय में यह है कि वे प्रश्न से अधिक ऐसी टिप्पणियाँ हैं, जिनमें रामायण कालीन अ*र्थशास्त्र* का निचोड़ भरा है।

रामायण के बडोदरा से प्रकाशित समीक्षित संस्करण में राम के ये प्रश्न कुल 58 श्लोकों में प्रस्तुत किये गये हैं, जब कि गीता प्रेस, गोरखपुर के संस्करण में 72 श्लोकों में। निश्चय ही *रामायण* के आद्य संस्करण में राम की कुशल प्रश्नावली को कुछ और लम्बा कर के इस प्रसंग में प्रक्षिप्तांश इस दृष्टि से जोड़े गये हैं कि *अर्थशास्त्र* के कुछ और विचार समाहित किये जा सकें। यह पूरा प्रसंग ईसापूर्व की पहली सहस्राब्दी में *अर्थशास्त्र* के विकास का एक ख़ाका भी प्रस्तुत करता है, लेकिन इस दृष्टि से इसका सम्यक अध्ययन नहीं किया गया है। राम जिस *अर्थशास्त्र* की रूपरेखा यहाँ प्रस्तुत कर रहे हैं, वह कौटिल्य के *अर्थशास्त्र* से बहुत अलग मालूम पड़ता है, क्योंकि कौटिल्य का अ*र्थशास्त्र* तो आन्वीक्षिकी को बहुत महत्त्व देता है, और राम आन्वीक्षिकी के आधार पर बात करने वाले लोकायतिकों के ख़िलाफ़ मंतव्य प्रकट करते हैं। राम जिस *अर्थशास्त्र* के पक्षधर हैं, उसके विशेषज्ञ

04_radhaballav_Layout 1 6/3/2015 4:36 PM Page 72

उनके समय में सुधन्वा नाम के अमात्य हैं, तभी वे *अर्थशास्त्र* विशारद सुधन्वा को पूरा सम्मान दिया जा रहा है या नहीं जैसा प्रश्न भरत से करते हैं। यह *अर्थशास्त्र* लोकायतिकों के *अर्थशास्त्र* से किस तरह अलग है, यह भी राम के इन कुशल प्रश्नों में संकेत मिलता है। रामसम्मत अ*र्थशास्त्र* धर्मशास्त्रों पर टिका हुआ है, और लोकायतिकों का अ*र्थशास्त्र* तर्कप्रधान आन्वीक्षिकी विद्या पर। कौटिल्य अपने अ*र्थशास्त्र* में धर्मशास्त्रों का हवाला नहीं देते, और अपने ग्रंथ के आरम्भ में आन्वीक्षिकी को सबसे बड़ी विद्या बताते हुए उसके महत्त्व पर प्रकाश डालते हैं। अत: राम के *अर्थशास्त्र* व कौटिलीय अ*र्थशास्त्र* में बहुत सी समानताएँ होते हुए भी तात्त्विक भेद है।

रामायण में राम ने अपने समय के *अर्थशास्त्र* के मुख्य सूत्र अपनी कुशल प्रश्नावली में दिये हैं। एक अन्य *अर्थशास्त्र* का विस्तार से प्रतिपादन *महाभारत* में भीष्म ने किया है। राम ने *अर्थशास्त्र* शब्द का प्रयोग भी ज्ञान के एक प्रस्थान के अर्थ में किया है, भीष्म इस प्रस्थान को *अर्थशास्त्र* नहीं कहते। वस्तुत: भीष्म राजधर्म नामक जिस शास्त्र का विशद निरूपण करते हैं, कौटिल्य में आ कर वही *अर्थशास्त्र* बन जाता है।

महाभारत अर्थशास्त्र अथवा राज्य-प्रबंधन के सिद्धांतों व तद्विषयक चिंतन का एक महाकोश है। शांतिपर्व के आरम्भ में युधिष्ठिर के साथ चारों पाण्डव भाइयों और द्रौपदी की विस्तृत बहस में इसके अनेक विचार गुँथे हुए हैं। द्रौपदी दण्ड-नीति को सर्वोपरि मानती है। दण्ड के बिना क्षत्रिय ही क्या, दण्ड का प्रयोग न कर सकने वाला राजा राज्य ही नहीं पा सकता, और न ही उसकी प्रजा चैन से रह सकती है।[5] यहाँ दण्ड ही सबसे बड़ा और अपरिहार्य राजधर्म है, राजा दण्ड-नीति का सही-सही प्रयोग करे तो राज्य में सारे उपक्रम सिद्ध हो जाते हैं।[6] दूसरी ओर व्यास तर्कशास्त्र, धर्मशास्त्र और दण्ड-नीति, तीनों के समन्वय की बात कहते हैं।[7] सम्भवत: व्यास के मुँह से कहवाए गये ये कथन *महाभारत* में कौटिल्य के *अर्थशास्त्र* के बाद जोड़े गये हैं, क्योंकि उनमें कौटिल्य के विचारों की अनुगूँज है। व्यास कौटिल्य की भाँति आन्वीक्षिकी, त्रयी, वार्ता और दण्डनीति— इन चारों को राज्य-प्रबंधन में समाहित करने की संस्तुति करते हैं।[8]

महाभारत के शांतिपर्व के अंतर्गत लगभग सौ अध्यायों में भीष्म ने राजधर्म का निरूपण किया है, जिसमें उन सारे विषयों को समेट लिया गया है, जो बाद में कौटिल्य के *अर्थशास्त्र* में निरूपित हुए। राम जिस *अर्थशास्त्र* के आधार पर भरत से कुशल प्रश्न कर रहे हैं, उनमें समेटा गया अ*र्थशास्त्र* जिस तरह कौटिलीय अ*र्थशास्त्र* से भिन्न है, उसी तरह भीष्म का राजधर्मनिरूपण भी कौटिल्य के शास्त्र से अलग है। भीष्म केवल लोकयात्रा पर आधारित धर्म को उचित नहीं मानते। सज्जनों का धर्म इससे कुछ अलग हट कर होता है।[9] इसके विपरीत कौटिल्य का *अर्थशास्त्र* लोकयात्रा पर आधारित है।

भीष्म कहते हैं कि इस राजधर्म में त्रिवर्ग (धर्म, अर्थ और काम) समाहित है, और मोक्ष भी इसमें निश्चित रूप से समग्रत: समाविष्ट है ही।[10] जिस तरह घोड़े को काबू में रखने के लिए चाबुक चाहिए, इसी तरह लोगों को क़ाबू में रखने के लिए राजा के हाथ में राजधर्म होना चाहिए। [11] इसके

---

[5] नादण्ड: क्षत्रियो भाति नादण्डो भूमिमश्नुते।
नादण्डस्य प्रजा राज्ञ: सुखं विन्दन्ति भारत।। *महाभारत,* शांतिपर्व, 14.14 (गीता प्रेस सं.)

[6] वही, 15.2, 29.

[7] तर्कशास्त्रकृता बुद्धिधर्मशास्त्रकृता च या।
दण्डनीतिकृता चैव त्रैलोक्यमपि साधयेत्।। वही, 24.17 के पश्चात्.

[8] वही, 24.18 के पूर्व.

[9] *महाभारत,* शांतिपर्व, 142.19 (गीता प्रेस सं.).

[10] वही, 56.4.

[11] वही, 56.5.

04_radhaballav_Layout 1 6/3/2015 4:36 PM Page 73

बावजूद भीष्म के मुख से महाभारतकार ने जिस *अर्थशास्त्र* की प्रस्तावना रचवाई है, वह अपनी गहरी संवेदनात्मक दृष्टि में अनूठा है। कौटिल्य भी प्रजाहित और प्रजा के भरण-पोषण को राजा के लिए सबसे आवश्यक कर्तव्य मानते हैं। पर भीष्म इसे कुछ अलग ढंग से कहते हैं कि 'राजा को गर्भवती स्त्री की तरह हो जाना चाहिए। जैसे गर्भवती स्त्री अपनी पसंद-नापसंद का विचार छोड़ पेट में पलते बच्चे के लिए ही दिन-रात सोचती है, ऐसे ही राजा अपने प्रिय का विचार छोड़ कर लोकहित के बारे में सोचे।'[12] राजा कमज़ोर हो, तो उसके अधीनस्थ अधिकारी किस तरह घूस, धोखाधड़ी और भ्रष्टाचार द्वारा सारे तंत्र को छिन्न-भिन्न कर देते हैं— यह भीष्म विस्तार से बताते हैं।[13] भीष्म के इस *अर्थशास्त्र* में राष्ट्र या धरती को गौ की तरह माना गया है, जिसका शुल्क (टैक्स) आदि द्वारा राजा दोहन करता है। इसके अनुसार जैसे भौंरा धीरे-धीरे फूल को क्षति पहुँचाए बिना उसका रस लेता है, उसी तरह राजा को बछड़े (प्रजा) का ध्यान रखते हुए इस राष्ट्ररूपी गौ का उसके थनों को क्षति पहुँचाए बिना मृदुदोहन करना चाहिए।[14]

रामायण और *महाभारत* में राम और भीष्म द्वारा प्रतिपादित अर्थशास्त्रों से कौटिल्य के *अर्थशास्त्र* का अनोखापन लोक को वरीयता देने के साथ ही आन्वीक्षिकी (तर्कपूर्वक परीक्षण) पर बल देने के कारण है। राम आन्वीक्षिकी का विरोध करते हैं, भीष्म भी उसकी अपेक्षा धर्मशास्त्रों को अधिक वरीयता देते हैं। आन्वीक्षिकी भारतीय दर्शन का सबसे पुराना प्रस्थान है, जिसमें ईश्वर अथवा सृष्टि को रचने वाली किसी सर्वात्मक सत्ता के लिए स्थान नहीं है। कौटिल्य कहते हैं कि '... आन्वीक्षिकी सारी विद्याओं का दीपक है, सारे शास्त्रों की खान है तथा सारे कार्यों के लिए उपाय है।' ■

कौटिल्य के *अर्थशास्त्र* की विशेषता

रामायण और *महाभारत* में राम और भीष्म द्वारा प्रतिपादित अर्थशास्त्रों से कौटिल्य के *अर्थशास्त्र* का अनोखापन लोक को वरीयता देने के साथ ही आन्वीक्षिकी (तर्कपूर्वक परीक्षण) पर बल देने के कारण है। राम आन्वीक्षिकी का विरोध करते हैं, भीष्म भी उसकी अपेक्षा धर्मशास्त्रों को अधिक वरीयता देते हैं। आन्वीक्षिकी भारतीय दर्शन का सबसे पुराना प्रस्थान है, जिसमें ईश्वर अथवा सृष्टि को रचने वाली किसी सर्वात्मक सत्ता के लिए स्थान नहीं है। कौटिल्य के अनुसार आन्वीक्षिकी में तीन दर्शन आते हैं: सांख्य, योग और लोकायत। अपने ग्रंथ के आरम्भ में ही कौटिल्य आन्वीक्षिकी की प्रशंसा करते हुए कहते हैं कि 'आन्वीक्षिकी किसी भी प्रस्ताव के बलाबल की हेतुओं के आधार पर अन्वीक्षा करते हुए लोक का उपकार करती है, विपत्ति और अभ्युदय में मनुष्य की बुद्धि को व्यवस्थित रखती है, प्रज्ञावाक्यों से उसे विशारद बनाती है। वास्तव में आन्वीक्षिकी सारी विद्याओं का दीपक है, सारे शास्त्रों की खान है तथा सारे कार्यों के लिए उपाय है।'[15] स्पष्ट है कि कौटिल्य धर्म या सम्प्रदायविशेष में आस्था के

---

[12] वही, 56.44-46.

[13] वही, 56.48-61.

[14] वही, 56.44-46.

[15] साङ्ख्यं योगो लोकायतं चेत्यान्वीक्षिकी। ...बलाबले चैतासां हेतुभिरन्वीक्षमाणान्वीक्षिकी लोकस्योपकरोति, व्यसनेऽभयुदये च बुद्धिमवस्थापयति, प्रज्ञावाक्यवैशारद्यं च करोति।

प्रदीपः सर्वविद्यानामुपायः सर्वकर्मणाम्।
आश्रयः सर्वधर्माणां शश्वदान्वीक्षिकी मता।। *अर्थशास्त्र* 1.2.1.

04_radhaballav_Layout 1 6/3/2015 4:36 PM Page 74

बजाय तर्क और प्रमाणों का उपयोग लोकोपकार के लिए करने में विश्वास रखते हैं। इस तरह *रामायण* और *महाभारत* में निरूपित *अर्थशास्त्र* धर्मशास्त्र के पासंग बन कर विकसित हुए, पर कौटिल्य का *अर्थशास्त्र* आन्वीक्षिकी के उस मूल पर विकसित हुआ जिसका आगे चल कर क्षय होता गया।[16]

कौटिल्य का *अर्थशास्त्र* को एक बड़ा योगदान यह है कि उन्होंने इस शास्त्र को धर्मशास्त्र के सामने एक स्वायत्त अनुशासन के रूप में स्थापित किया। यद्यपि धर्मशास्त्रों में विचारित धर्म के अंतर्गत उन सभी विधि-विधानों, व्यवस्थाओं व आचार तथा पद्धतियों का विमर्श किया जाता है, जो समाज को धारण करते हैं, पर धर्मशास्त्र के अंतर्गत लिखे जाने वाले ग्रंथों में पाप, पुण्य, प्रायश्चित्त, शुद्धि जैसे विषय प्रधान हो गये और समाज को धारण करने वाली व्यवस्थाएँ— नगर-नियोजन, ग्रामों की बसाहट, राज्य-प्रबंधन आदि छूटते गये। *अर्थशास्त्र* का विकास लोक से सीधे जुड़े व लोकोपकार के लिए अपेक्षित इन व्यवस्थाओं के लिए हुआ होगा। धर्मशास्त्र के अंतर्गत लिखित मनु, याज्ञवल्क्य आदि की स्मृतियों को क़ानून या संविधान के रूप में प्रस्तावित किया गया, पर उनकी मान्यता आचारसंहिताओं के रूप में अधिक रही। कौटिल्य ने इनके समानांतर तथा इनके पूरक के रूप में *अर्थशास्त्र* को रखा। राज्य-व्यवस्था के लिए उनका ग्रंथ भी एक आचार-संहिता के रूप में मान्य हुआ। हरिहरनाथ त्रिपाठी कहते हैं, 'यह तो कहना कठिन है कि राज्य धर्मशास्त्रों को संविधान की तरह मानने के लिए बाध्य था, लेकिन इतना तो स्पष्ट है कि वे न्यायिक प्रशासन के आधार थे। व्यवहार में उनका किस मात्रा में उपयोग हो रहा था ... यह प्रमाणों के आधार पर नहीं सिद्ध किया जा सकता, लेकिन निबंधों, टीकाओं एवं सामान्य ऐतिहासिक सामग्रियों से सिद्ध होता है कि वे जीवन के व्यवहार से अन्यतम रूप से सम्बद्ध हो गये थे।'[17]

मनुस्मृति, याज्ञवल्क्यस्मृति जैसे ग्रंथ कौटिल्य के बाद लिखे गये। पर *बोधायनधर्मसूत्र, पारस्करधर्मसूत्र* जैसे धर्मशास्त्र के सूत्र ग्रंथ तो कौटिल्य के पहले लिखे जा चुके थे। कौटिल्य इनका कहीं हवाला नहीं देते। उनकी निगाह में *अर्थशास्त्र* की परम्परा धर्मशास्त्र से अलग थी।

कौटिल्य, कौटल्य, चाणक्य और विष्णुगुप्त

अर्थशास्त्र के कर्तृत्व को ले कर आधुनिक विद्वानों में दो सम्प्रदाय हैं। एक इस ग्रंथ का प्रणेता चंद्रगुप्त मौर्य के समकालीन चाणक्य विष्णुगुप्त को मानता है, और इसी चाणक्य विष्णुगुप्त का दूसरा नाम कौटिल्य भी मानता है। इस मान्यता के प्रबल पक्षधरों में *अर्थशास्त्र* के आद्यसम्पादक शामशास्त्री थे। पश्चिमी विद्वानों में हिलेब्रांट, हर्तेल, याकोबी और विंसेंट स्मिथ ने उनका समर्थन किया। दूसरे सम्प्रदाय में वे विद्वान आते हैं, जिन्हें भारतीय शास्त्रपरम्परा में बहुत कुछ जाली दिखाई देता है। इन्होंने *अर्थशास्त्र* को भी एक जाली ग्रंथ माना। इनकी मान्यता का आधार मेगस्थनीज़ के यात्रावृत्तांत थे। विद्वानों के इस सम्प्रदाय में औटो स्टाइन, जौली, विंटरनित्स अग्रणी रहे।

---

[16] जब न्यायदर्शन पूर्णविकसित हो गया, तो उसने अपनी तर्कप्रधानता के आधार पर आन्वीक्षिकी को आत्मसात् करने का दावा किया. न्यायसूत्र के भाष्य में वात्स्यायन ने कहा कि न्याय ही आन्वीक्षिकी है. पर आन्वीक्षिकी सभी तर्काश्रित दर्शनों का समुच्चय है. आचार्य परम्परा में यह समझ बनी रही. दसवीं शताब्दी में राजशेखर अपनी *काव्यमीमांसा* में आन्वीक्षिकी के दो प्रकार बताते हैं पूर्वपक्ष और उत्तरपक्ष. पहले में बौद्ध, जैन और चार्वाक या लोकायत ये तीन दर्शन आते हैं, तो दूसरे में भी सांख्य, न्याय और वैशेषिक ये तीन दर्शन. राजशेखर के अनुसार ये छहों दर्शन तर्कपरायण होने से आन्वीक्षिकी हैं. इनमें बहस के तीन प्रकारों - वाद, जल्प और वितण्डा का विशेष प्रयोग होता है (द्विधा चान्वीक्षिकी पूर्वोत्तरपक्षाभ्याम्. अर्हद्भदन्तदर्शने लोकायतं च पूर्वः पक्षः. साङ्ख्यं न्यायवैशेषिकौ चोत्तरः। त इमे षट् तर्काः। तत्र च तिस्रः कथाः भवन्ति वादो जल्पो वितण्डा च। काव्यमीमांसा अध्याय 2, पृ. 24-25).

[17] धर्मशास्त्र और *अर्थशास्त्र* विधीय व्याख्या— डा. हरिहरनाथ त्रिपाठी, *अर्थशास्त्र इन मॉडर्न वर्ल्ड,* : 128.

04_radhaballav_Layout 1 6/3/2015 4:36 PM Page 75

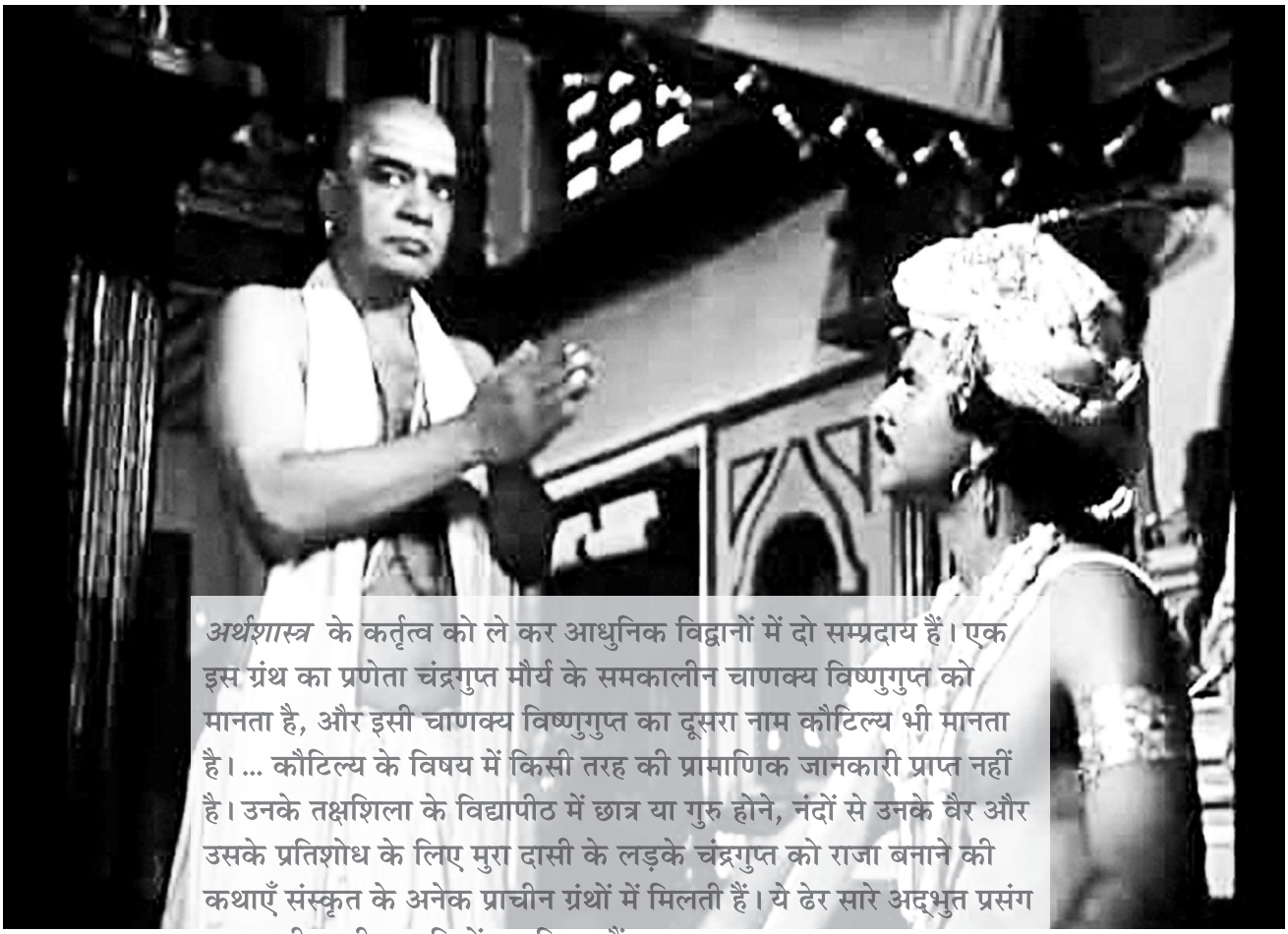

अर्थशास्त्र के कर्तृत्व को ले कर आधुनिक विद्वानों में दो सम्प्रदाय हैं। एक इस ग्रंथ का प्रणेता चंद्रगुप्त मौर्य के समकालीन चाणक्य विष्णुगुप्त को मानता है, और इसी चाणक्य विष्णुगुप्त का दूसरा नाम कौटिल्य भी मानता है। ... कौटिल्य के विषय में किसी तरह की प्रामाणिक जानकारी प्राप्त नहीं है। उनके तक्षशिला के विद्यापीठ में छात्र या गुरु होने, नंदों से उनके वैर और उसके प्रतिशोध के लिए मुरा दासी के लड़के चंद्रगुप्त को राजा बनाने की कथाएँ संस्कृत के अनेक प्राचीन ग्रंथों में मिलती हैं। ये ढेर सारे अद्‌भुत प्रसंग भारत की जातीय स्मृतियों का हिस्सा हैं।

कौटिल्य के विषय में किसी तरह की प्रामाणिक जानकारी प्राप्त नहीं है। उनके तक्षशिला के विद्यापीठ में छात्र या गुरु होने, नंदों से उनके वैर और उसके प्रतिशोध के लिए मुरा दासी के लड़के चंद्रगुप्त को राजा बनाने की कथाएँ संस्कृत के अनेक प्राचीन ग्रंथों में मिलती हैं। ये ढेर सारे अद्‌भुत प्रसंग भारत की जातीय स्मृतियों का हिस्सा हैं। इनसे हमारा इतिहास रचा गया है। आधुनिक इतिहासकारों की दृष्टि में सब जाली हैं।

अर्थशास्त्र का अंतिम श्लोक है :

येन शास्त्रं त शस्त्रं च नंदराजगता च भूः।
अमर्षेणोद्धृतान्याशु तेन शास्त्रमिदं कृतम्।।[18]

(जिसने शास्त्र और शस्त्र तथा नंदराजा या नंदराजाओं के द्वारा अधिकृत धरती— इन तीनों का अमर्ष के साथ उद्धार किया, उसी ने इस शास्त्र का निर्माण किया है.)

---

[18] *अर्थशास्त्र* , भाग 3, : 247.

04_radhaballav_Layout 1 6/3/2015 4:36 PM Page 76

अर्थशास्त्र की पुरानी पोथियों में मिलने वाले इस अंतिम श्लोक की प्रामाणिकता पर अकारण संदेह नहीं किया जाना चाहिए। श्लोक की शब्दावली में कौटिल्य मौजूद हैं। वे शस्त्र, शास्त्र और धरती इन तीनों को अमर्ष में भर कर ऊपर उठाने की बात कह रहे हैं। अमर्ष (चिरसंचित वैर) से भर कर शस्त्र उठाए जाएँ, यह तो समझा जा सकता है, पर शास्त्र और धरती का अमर्ष के कारण उद्धार करने का क्या अर्थ? कौटिल्य कहना यह चाह रहे हैं कि राज्य के विषय में पहले के जितने शास्त्र हैं, उनसे उनकी असहमति है। धरती का पालन करने के लिए जितने तरीक़े अपनाए जाते रहे हैं, वे भी उन्हें स्वीकार्य नहीं है। उनका अमर्ष इनसे असहमति के कारण है।

उक्त श्लोक के बाद एक और श्लोक भी *अर्थशास्त्र* की पोथियों में मिलता है :

दृष्ट्वा विप्रतिपत्तिं बहुधा शास्त्रेषु भाष्यकाराणाम्।
स्वयमेव विष्णुगुप्तश्चकार सूत्रं च भाष्यं च।।

(*अर्थशास्त्र* के क्षेत्र में भाष्यकारों के बीच बहुत असहमतियों या मतभेदों को देखते हुए स्वयं विष्णुगुप्त ने इस ग्रंथ के सूत्रों व भाष्य का प्रणयन किया।)

अर्थशास्त्र नामक ग्रंथ के प्रणेता के वास्तविक नाम को ले कर विकल्प सुझाए जाते रहे हैं। प्राचीन टीकाग्रंथों व *अर्थशास्त्र* की ही पुरानी पोथियों में इसके प्रणेता का नाम कौटल्य मिलता है। महामहोपाध्याय टी. गणपति शास्त्री कौटिल्य के स्थान पर कौटल्य ही प्रामाणिक पाठ मानते हैं। कौटल्य के पिता कुटल का भी उल्लेख मिलता है। पर कुटिल से संबंध जोड़ कर कुटिल के पुत्र कौटिल्य मान कर अधिक प्रचलित व स्वीकार्य नाम कौटिल्य चल पड़ा। चणक देश के निवासी होने के कारण कौटिल्य को चाणक्य के नाम से भी जाना गया। उनका वास्तविक नाम विष्णुगुप्त था— यह भी माना जाता रहा है। कहीं कहीं विष्णुशर्मा के नाम से भी उन्हें संदर्भित किया गया है। *अर्थशास्त्र* की टीका *जयमंगला* के प्रणेता के अनुसार कौटिल्य चाणक्य का गोत्रनाम है और विष्णुगुप्त भी चाणक्य का ही दूसरा नाम है।

सम्भवत: कौटिल्य ने *अर्थशास्त्र* के अतिरिक्त अन्य ग्रंथ भी अलग-अलग विषयों पर लिखे थे। *अर्थशास्त्र* के एक टीकाकार भट्टस्वामी ने अपनी टीका *प्रतिपदपञ्चिका* में उनके रचे *धातुकौटिलीय* नामक ग्रंथ का संकेत दिया है, जो धातुशास्त्र (मैटलर्जी) का ग्रंथ रहा होगा। वराहमिहिर ने अपनी *बृहत्संहिता* में आचार्य चाणक्य के ज्योतिष संबंधी ग्रंथ से एक अंश उद्धृत किया है, जिससे लगता है कि चाणक्य या कौटिल्य ने ज्योतिष पर भी कोई ग्रंथ लिखा होगा। *चाणक्यराजनीति* नाम से एक लोकप्रिय उक्तियों का संकलन तो चाणक्य का लिखा माना जाता रहा है। पर वह बाद में बनाया गया संकलन है, जिस पर चाणक्य का नाम चस्पाँ कर दिया गया है।

संस्कृत की पारम्परिक उक्तियों में पक्षिल स्वामी, मल्लनाग, वात्स्यायन, चाणक्य, विष्णुगुप्त या विष्णुशर्मा तथा कौटिल्य— ये एक ही व्यक्ति के नाम बताए जाते रहे हैं। *पंचतंत्र* और उसके कथित रचयिता विष्णुशर्मा से *अर्थशास्त्र* के प्रणेता का संबंध या दोनों का अभेद अनुसंधान का विषय है। *महाभारत* में भीष्म ने अपने राजधर्मनिरूपण में राजनीति के सिद्धांत समझाने के लिए पशुकथाओं का दृष्टांत के रूप में खूब उपयोग किया है। *अर्थशास्त्र* के निरूपण में दृष्टांत के लिए प्राचीन इतिहास के पन्ने कौटिल्य भी अनेक स्थलों पर खोलते हैं। असम्भव नहीं कि कथा कहने में अपनी रुचि के कारण उन्होंने राजनीति के तत्त्वबोध को पशुकथाओं के द्वारा प्रकट करने की विधा भी *अर्थशास्त्र* के प्रणयन के बाद अपनाई हो।

मुद्राराक्षस नाटक के रचनाकार विशाखदत्त राजपरिवार से सम्बद्ध थे। पुराने इतिहास की जानकारियों के लिए उनके अपने स्रोत रहे होंगे। उन्होने चाणक्य के नंदविनाश की घटनाओं के बाद के प्रसंगों को ले कर *मुद्राराक्षस* नाटक लिखा। गुप्तकाल के राजा रामगुप्त, जिसका अस्तित्व तक मानने के लिए आधुनिक इतिहासकारों में कुछ तैयार नहीं हैं, को ले कर उन्होंने *देवीचंद्रगुप्त* नाटक

04_radhaballav_Layout 1 6/3/2015 4:36 PM Page 77

लिखा। यदि विशाखदत्त ने जिस इतिहास को नाटकीय रूप दिया है, वह प्रामाणिक माना जाए, तो कहा जा सकता है कि नंदविनाश के बाद चाणक्य के लिए एक बड़ा काम करने को और रह गया था— नंद के अत्यंत विश्वासपात्र और योग्य मंत्री राक्षस को चंद्रगुप्त का पक्षधर बना कर उसे चंद्रगुप्त का अमात्य पद सौंप देना। इसे सम्पन्न कर के चाणक्य सक्रिय राजनीति से अलग हो कर और शास्त्रप्रणयन और अध्यापन की दुनिया में लौट गये। तब जीवन के उत्तरार्ध में *पंचतंत्र* जैसा अनोखा कथाग्रंथ तथा कुछ और शास्त्रीय ग्रंथ उन्होंने तैयार किये हों— यह हो सकता है।

धर्मशास्त्र के अंतर्गत लिखे जाने वाले ग्रंथों में पाप, पुण्य, प्रायश्चित्त, शुद्धि जैसे विषय प्रधान हो गये और समाज को धारण करने वाली व्यवस्थाएँ— नगर-नियोजन, ग्रामों की बसाहट, राज्य-प्रबंधन आदि छूटते गये। ... कौटिल्य ने इनके समानांतर तथा इनके पूरक के रूप में *अर्थशास्त्र* को रखा। ... कौटिल्य इनका कहीं हवाला नहीं देते। उनकी निगाह में *अर्थशास्त्र* की परम्परा धर्मशास्त्र से अलग थी। ■

अर्थशास्त्र की विषयवस्तु

अर्थशास्त्र एक विश्वकोशात्मक ग्रंथ है। जिससें पंद्रह अधिकरणों या खण्डों के अंतर्गत 150 अध्यायों में 180 प्रकरणों पर विचार किया गया है। विशद और प्रांजल गद्य में किये गये विवेचन के अलावा इसमें 380 कारिकाएँ सूत्रात्मक उक्तियाँ और अनेक श्लोक अलग से हैं।

टीकाकारों ने *अर्थशास्त्र* ग्रंथ के तीन खण्ड माने हैं— तंत्र, आवाप तथा परिशेष। तंत्र के अंतर्गत अपने राज्य के योगक्षेम की पद्धतियाँ निरूपित हैं, आवाप में शत्रुराज्यों से संबंध का निरूपण है।

अर्थशास्त्र में पंद्रह अधिकरणों या खण्डों में विद्याओं की संख्या व उनकी आवश्यकता, शिक्षा-प्रणाली, *अर्थशास्त्र* तथा शिक्षा का उद्देश्य, इंद्रियजन्य, अमात्यों, मंत्रियों व पुरोहितों की संख्या, योग्यता आदि, गूढ़पुरुष (चर), मंत्रणा, दूत भेजना, राजकुमारों का भरण-पोषण, निर्वासित राजकुमारों का आचरण, अंत:पुर की रक्षा, राजा की दिनचर्या आदि विषयों पर पहले अधिकरण के 18 अध्यायों में विचार किया गया है। दूसरे अधिकरण में 38 अध्यायों में जनपदनिवेश, भूमिच्छिद्र (खेती के अयोग्य ज़मीन) का विधान, दुर्गविधान व दुर्गनिवेश, सन्निधाता (भण्डार का अधिकारी), समाहर्ता (कोश का अधिकारी), अक्षपटलाधिकारी, सुवर्णाध्यक्ष, कोष्ठागाराध्यक्ष, पण्याध्यक्ष, कुप्याध्यक्ष, आयुधागाराध्यक्ष, तुलामानाधिकारी, शुल्काध्यक्ष, सूत्राध्यक्ष (कपास से बनने वाली वस्तुओं का अधीक्षक), सीताध्यक्ष (कृषि का अधीक्षक), सुराध्यक्ष, सूनाध्यक्ष (कसाईख़ाने का अधीक्षक), गणिकाध्यक्ष, नौकाध्यक्ष, गवाध्यक्ष (दूध देने वाले पशुओं का अधीक्षक), अश्वाध्यक्ष, हस्त्यध्यक्ष, रथाध्यक्ष, पत्यध्यक्ष (सेना का अधीक्षक), सेनापति, मुद्राध्यक्ष, विवीताध्यक्ष (चरागाह का अधीक्षक) आदि अधिकारियों के दायित्व बताए गये हैं। तीसरे अधिकरण में व्यवहार या न्यायालयों की स्थापना, विवाद, विवाह, दायविभाग, वास्तुशास्त्र, गिरवी, कर्ज़ की व्यवस्थाएँ व क़ानून, दासों की व्यवस्था, क्रयविक्रय के विधान, वाक्पारुष्य (गालीगलौज के लिए दण्ड), द्यूत के नियम तथा अन्य विविध विषय हैं। चतुर्थ अधिकरण का विषय कंटकशोधन है। इसमें शिल्पियों, चरों आदि की सुरक्षा, सद्योमृत व्यक्ति की पहचान आदि विषय 13 अध्यायों में विवेचित हैं। पाँचवों अधिकरण में सात अध्यायों में दण्ड-विधान, कोश की रक्षा, भृत्यों का भरण, अनुजीवियों के साथ राजा का व्यवहार आदि विषय सात अध्यायों में विचारित हैं। छठे अधिकरण में प्रकृति व सातवें में षाड्गुण्य का विशेष विचार हैं।

04_radhaballav_Layout 1 6/3/2015 4:36 PM Page 78

आठवें अधिकरण के आठ अध्यायों में प्रजा, सेना व मित्रों पर पर पड़ने वाली विपत्तियों पर विचार है। नवें तथा दसवें अधिकरणों के कुल पच्चीस अध्यायों में सेना के प्रयाण तथा युद्ध के समय होने वाली व्यवस्थाओं का निरूपण है। ग्यारहवें में भेदनीति और बारहवें में दूतप्रयोग, तेरहवें में दुर्ग पर क़ब्ज़ा, चौदहवें में परघात व पंद्रहवें तंत्रयुक्तियों (शास्त्र की संरचना के घटकों) का विवरण है।

संस्करण

अर्थशास्त्र का पहला संस्करण शाम शास्त्री ने 1905 में *इण्डियन एंटीक्वेरी* में अंग्रेज़ी अनुवाद के साथ प्रकाशित किया। 1909 में शाम शास्त्री का संस्करण पुस्तकाकार भी छपा। *अर्थशास्त्र* प्रकाशित संस्करणों में आर. शाम शास्त्री मैसूर, 1909, लाहौर से रे. जौली तथा आर. श्मिट् के सम्पादन में दो खण्डों में *नयचंद्रिका* टीका के साथ 1923 तथा 1924 में, तथा टी. गणपति शास्त्री द्वारा सम्पादित उन्हीं की संस्कृत टीका के साथ संस्करण 1924–25 में तीन खण्डों में प्रकाशित हुआ। इसका चौथा अत्यंत महत्त्वपूर्ण सुसम्पादित संस्करण अंग्रेज़ी अनुवाद व विशद टिप्पणियों के साथ आर.पी. कांगले का है, जो 1966 में छपा। के.पी. जायसवाल ने *प्रतापचंद्रिका* टीका, सांब शिवशास्त्री तथा वी.आर. रामस्वामी शास्त्री ने *भाषाकौटिलीयम्* टीका, जी. हरिहर शास्त्री ने *जयमङ्गला* तथा भिक्षुप्रमति की *चाणक्य टीका* के सम्पादन का कार्य किया है। मुनि जिनविजय ने *नीतिनिर्णीति* के उपलब्ध अंश का सम्पादन व प्रकाशन किया।

टीकाएँ

अर्थशास्त्र की प्राचीन टीकाओं में *प्रतिपदचंद्रिका* (भट्टस्वामी,बारहवीं श.), *नयचंद्रिका* (महामहोपाध्याय माधवमिश्र), *जयमङ्गला, चाणक्य टीका, नीतिनिर्णीति* (योग्घम अथवा मुग्धविलास), *भाषाकौटिलीयम्* उल्लेखनीय हैं। एन.पी. उन्नि के मतानुसार पहली चार टीकाएँ केरल में लिखी गयीं, *नीतिनिर्णीति* उत्तरभारत में। *नयचंद्रिका, जयमङ्गला* तथा *चाणक्य टीका* के प्रणेता अज्ञात अथवा विवादित हैं। उनका समय भी अनिर्णीत है। *भाषाकौटिलीयम्* को छोड़ कर ये सब टीकाएँ संस्कृत में हैं। *नीतिनिर्णीति* के प्रणेता जैन आचार्य मुग्धविलास हैं। यह *अर्थशास्त्र* के पहले अधिकरण तक ही है। दूसरे अधिकरण के आरम्भिक भाग का भी व्याख्या इसमें है।

भाषाकौटिलीयम् मलयालम भाषा में है। *अर्थशास्त्र* का परम्पराओं के बोध के साथ विशद व्याख्यान इसमें किया गया है। पर दुर्भाग्य से यह टीका भी सातवें अधिकरण तक ही मिलती है। यह टीका सम्भवत: बारहवीं शताब्दी में लिखी गयी। *भाषाकौटिलीयम्* की ओर सबसे पहले ध्यान आकृष्ट कराने का श्रेय शाम शास्त्री को जाता है। पर वे अपने अंग्रेज़ी अनुवाद में इस अत्यंत महत्त्वपूर्ण टीका का उपयोग न कर सके, न ही शायद वे इस के महत्त्व को समझ सके। *अर्थशास्त्र* के पाठ व विषयवस्तु की गुत्थियों को सुलझाने में टी. गणपति शास्त्री जैसे आधुनिक टीकाकारों ने इसकी बहुत सहायता ली है। इस टीका से यह तो एकदम स्पष्ट हो जाता है कि देश के सारे भागों में, विशेष रूप में केरल में *अर्थशास्त्र* के पठनपाठन की जीवंत परम्परा थी, और जिस तरह आज यह ग्रंथ पंक्ति-पंक्ति शब्द-शब्द में दुरूह हो गया है, मध्यकाल तक वैसा न था।

बीसवीं शताब्दी हमारे लिए इस कारण एक बड़ा समय है कि *अर्थशास्त्र* पर सबसे विशद संस्कृत टीका इसी दौरान लिखी गयी। टीकाकार थे आधुनिक काल के संस्कृत के सबसे प्रकाण्ड पण्डितों में एक टी. गणपति शास्त्री, जिन्हें बीसवीं सदी के संस्कृत के संसार में सबसे अधिक चर्चित खोज-भास के नाटकों को सामने लाने का श्रेय भी जाता है। गणपति शास्त्री को *अर्थशास्त्र* की पुरानी हस्तलिखित पोथियाँ और उस पर लिखी प्राचीन टीकाएँ उपलब्ध थीं। उन्होंने उनका विशेष रूप से *भाषाकौटिलीयम्* का भरपूर उपयोग अपनी टीका में किया।

04_radhaballav_Layout 1 6/3/2015 4:36 PM Page 79

काशी की परम्परा में *अर्थशास्त्र* का स्वाध्याय और अभ्यास महामहोपाध्याय राजेश्वर शास्त्री द्राविड़ ने किया। उन्होंने *अर्थशास्त्र* पर *वैदिकसिद्धांतसंरक्षिणी* नाम से टीका भी लिखी, तथा *जयमङ्ला* पर टिप्पणियाँ भी। *वैदिकसिद्धांतसंरक्षिणी* तथा *जयमङ्लाक्रोडपत्रम्* नामक उनकी दो टीकाएँ सम्पूर्णानंद संस्कृत विश्वविद्यालय से *श्रीमूल, जयमङ्ला* तथा *नीतिनिर्णीति* इन तीन और टीकाओं के साथ विश्वनाथ शास्त्री दातार के सम्पादन में प्रकाशित हैं।

वात्स्यायन के *कामसूत्र* पर कौटिल्य का बहुत ही गहरा असर है। *अर्थशास्त्र* का अध्ययन राजा के लिए आवश्यक था। भरतमुनि कौटिल्य के ग्रंथ से परिचित हैं या नहीं— यह तो कहना कठिन है, पर नाटक के पात्रों में राजा का लक्षण बताते हुए वे यह अवश्य जोड़ते हैं कि राजा को *अर्थशास्त्र* का जानकार होना चाहिए। ■

धुर दक्षिण में इस पर टीकाएँ लिखा जाना साबित करता है कि *अर्थशास्त्र* कई शताब्दियों तक सारे देश में सबसे ज़्यादा पढ़ी जाने वाली पुस्तकों में एक रहा, और इसकी व्याख्या की जीवंत परम्पराएँ देश के अलग अलग क्षेत्रों में व अलग-अलग समाजों में बनी रहीं। भारतीय सामाजिक, साहित्यिक व सांस्कृतिक धाराओं के नियमन और व्यवस्थापन में कौटिल्य के *अर्थशास्त्र* की कहीं प्रत्यक्ष तो कहीं परोक्ष विशिष्ट भूमिका रही है। कालिदास, विशाखदत्त, भारवि, माघ जैसे कालजयी रचनाकारों की पंक्तियों और पदावलियों में तथा मानस में कौटिल्य रमे हुए हैं। वात्स्यायन के *कामसूत्र* पर कौटिल्य का बहुत ही गहरा असर है। *अर्थशास्त्र* का अध्ययन राजा के लिए आवश्यक था। भरतमुनि कौटिल्य के ग्रंथ से परिचित हैं या नहीं— यह तो कहना कठिन है, पर नाटक के पात्रों में राजा का लक्षण बताते हुए वे यह अवश्य जोड़ते हैं कि राजा को *अर्थशास्त्र* का जानकार होना चाहिए।[19] राजा को सचिव इस तरह का रखना चाहिए जो बुद्धिमान, नीतिसम्पन्न, आलस्य से रहित, प्रियंवद, शत्रुओं के रंध्र (दुर्बल अक्ष) की विधि का जानकार, यात्रा के समय की पहचान रखने वाला, *अर्थशास्त्र* के मर्म में कुशल, अनुरक्त, ऊँचे कुल का तथा देशविद् और कालविद् हो।[20] राजा को चाहिए कि वह मंत्री, सचिव, प्राड्विवाक (न्यायाधीश) आदि सारे अधिकारी ऐसे रखे, जिनमें बृहस्पति के सिद्धांतों के अनुसार गुण हों (बृहस्पतिमतादेषां गुणांश्चाभिकांक्षयेत्— *नाट्यशास्त्र,* 24.88)

कौटिल्य की परम्परा

कौटिल्य ने अपने से पहले के *अर्थशास्त्र* के कम से कम दस आचार्यों या उनके सम्प्रदायों का उल्लेख किया है। ये हैं : मानव (मनु का सम्प्रदाय), बार्हस्पत्य (बृहस्पति का सम्प्रदाय), औशनस् (उशना या शुक्राचार्य का सम्प्रदाय), भारद्वाज या द्रोणाचार्य, विशालाक्ष, पराशर, पिशुन (नारद), कौणपदन्त (भीष्म), वातव्याधि (उद्भव) तथा बाहुदंतीपुत्र (इंद्र)।

अर्थशास्त्र के पहले सूत्र 'ओम् नमः शुक्रबृहस्पतिभ्याम्' में कौटिल्य शुक्राचार्य और बृहस्पति को नमन करते हैं। *अर्थशास्त्र* की परम्परा में शुक्राचार्य और बृहस्पति— ये दो अलग-अलग आचार्य कौटिल्य के संज्ञान में हैं। बृहस्पति चार्वाक या लोकायत दर्शन के प्रवर्तक माने गये हैं। इनके राज्यप्रबंधविषयक मतों का उल्लेख *महाभारत* में भीष्म ने अपने राज्यधर्मोपदेश में किया है।

---

[19] नाट्यशास्त्र, 24.78.

[20] वही, 24.82आ-84अ.

04_radhaballav_Layout 1 6/3/2015 4:36 PM Page 80

प्रथम अधिकरण के विद्यासमुद्देश के अंतर्गत बृहस्पति का मत बताया गया है। बृहस्पति के अनुयायी दो ही विद्याएँ मानते हैं— वार्ता (कृषि तथा पशुपालन) और दण्ड-नीति। वे त्रयी (तीनों वेद तथा उनसे सम्बद्ध शास्त्र) को विद्या के अंतर्गत नहीं गिनते। त्रयी तो संवरण (मुखौटा) मात्र है।[21] *श्रीमूल* टीका में संवरण मात्र का अर्थ करते हुए गणपति शास्त्री कहते हैं कि लोकयात्रा या लोकव्यवहार का जानकार बिना त्रयी को मान्यता दिये लोकतंत्र या प्रशासन का काम अच्छी तरह चला ही सकता है, पर ऐसे व्यक्ति को लोग नास्तिक कहकर उसकी निंदा करते हैं। इन निंदा से बचने के लिए त्रयी को भी संवरण की तरह विद्या मान लिया जाता है। वास्तव में वह आवश्यक नहीं है। स्पष्ट ही चार्वाक दर्शन के प्रवर्तक बृहस्पति नास्तिक हैं, और कौटिल्य उनके मत का आदर करते हैं। शुक्राचार्य तो केवल दण्ड-नीति को ही विद्या मानते हैं। वह आ जाए, तो बाक़ी सारी विद्याएँ आ जाती हैं। कौटिल्य बृहस्पति और उशना या शुक्राचार्य के मतों को विशेष आदर देते हैं, उनके लोकयात्रा केंद्रित प्रस्थान को स्वीकार करते हैं, पर वे उनसे सर्वत्र सहमत नहीं है। अपने ग्रंथ के आरंभ में ही कौटिल्य दो या केवल एक ही विद्या मानने वाले बृहस्पति तथा शुक्र के मत को अस्वीकार करते हैं। वे चार विद्याएँ मानते हैं— आन्वीक्षिकी, त्रयी, वार्ता तथा दण्डनीति।

अर्थ और *अर्थशास्त्र* की कौटिलीय दृष्टि

जैसा कहा गया है, कौटिल्य के संदर्भ में अर्थ का आशय मात्र सम्पत्ति नहीं है, और *अर्थशास्त्र* सम्पत्ति का शास्त्र नहीं है। अर्थ का आशय कौटिल्य की दृष्टि में सम्पूर्ण व्यवहारजगत है। मनुष्यों की वृत्ति (व्यवहार) अर्थ है। इस भौतिक जगत में मनुष्य की प्रवृत्तियों का शास्त्र *अर्थशास्त्र* है। अर्थ का मतलब है मनुष्य सहित सारी पृथ्वी। इस पृथ्वी पर जो कुछ होना चाहिए, उसका संवर्धन करना और उसे हासिल करना सिखाने वाला शास्त्र *अर्थशास्त्र* है।[22]

अर्थ का एक और भी व्यापक आशय पुरुषार्थ या मनुष्य जीवन का समग्र ध्येय भी है। *अर्थशास्त्र* के नवम अधिकरण के अंतिम अध्याय में कौटिल्य ने राजा के लिए अर्थ व अनर्थ का विचार किया है। यहाँ अर्थ से आशय अर्थ, धर्म और काम इन तीन पुरुषार्थों से है। कौटिल्य कहते हैं कि अर्थ, धर्म और काम में वरीयता का क्रम भी यही होगा। अर्थ सर्वाधिक वरीय है, उसके बाद धर्म और फिर काम का क्रम आता है।[23]

कौटिल्य कठोर दण्डविधान लागू करने का पक्ष लेने वाले आचार्यों का मत उद्धृत कर के कहते हैं कि कठोर दण्ड उचित नहीं है। पर अपराधी को मृदुदण्ड या मामूली दण्ड देने से भी राजा का क्षय होता है। उचित दण्ड दिया जाना चाहिए। दण्ड-विधान का उद्देश्य मत्स्यन्याय (समाज में शक्तिशाली द्वारा निर्बल को दबाना) को दूर करना है। दण्ड-नीति का उद्देश्य प्रजा की रक्षा ही होना चाहिए।[24] दण्ड का मूल विनय है, विनय का मूल विद्या और विद्या और विनय दोनों का मूल हेतु इंद्रियजन्य है। इसको विस्तार से स्पष्ट कर के कौटिल्य कहते हैं कि यह सम्पूर्ण *अर्थशास्त्र* इंद्रियों पर विजय का

---

[21] वार्ता दण्डनीतिश्चेति बार्हस्पत्याः, संवरणमात्रं हि त्रयी लोकयात्राविद इति। दण्डनीतिरेका विद्येत्यौशनसाः, तस्यां हि सर्वविद्यारम्भाः प्रतिबद्धा इति। (*अर्थशास्त्र*, भाग 1, पृ.26)

[22] मनुष्याणां वृत्तिरर्थः, मनुष्यवती भूमिरित्यर्थः। तस्याः पृथिव्या लाभपालनोपायः शास्त्रम *र्थशास्त्र* मिति। (*अर्थशास्त्र*, भाग 3, : 241).

[23] अर्थ एव प्रधान इति कौटिल्यः अर्थमूलौ हि धर्मकामाविति। वही, भाग 3, : 98.

[24] नह्येवंविधं वशोपायनमस्ति भूतानां यथा दण्ड इत्याचार्याः। नेति कौटिल्यः। तीक्ष्णदण्डो हि भूतानामुद्वेजनीयः। मृदुदण्डः परिभूयते। यथार्हदण्डः पूज्यः। सुविज्ञातप्रणीतो हि दण्डः प्रजा धर्मार्थकामैर्योजयति। दुष्प्रणीतः कामक्रोधाभ्यामज्ञानाद् वानप्रस्थपरिव्राजकानपि कोपयति किमङ् पुनर्गृहस्थान्। अप्रणीतो हि मत्स्यन्यायमुद्भावयति। बलीयनबलं हि ग्रसते दण्डधराभावे। तेन गुप्तः प्रभावतीति। भाग 1, : 32-33.

04_radhaballav_Layout 1 6/3/2015 4:36 PM Page 81

शास्त्र है।[25] कौटिल्य का इंद्रियजय का *अर्थशास्त्र* आज के भोगवादी *अर्थशास्त्र* का प्रतिवाद है। वह शासनकर्ता राजा के आचरण को नहीं राजर्षि के आचरण को मानक के रूप में सामने रखता है। 'राजर्षिवृत्त' शीर्षक से कौटिल्य ने इस आदर्श राजा पर पूरा एक प्रकरण अपने *अर्थशास्त्र* में रखा है। पर इसका अर्थ यह नहीं कि राजा सुख का उपभोग न करे। वे यह भी कहते हैं राजा सुख न छोड़े, क्योंकि धर्म, अर्थ और काम ये तीनों एक दूसरे से जुड़े हैं। इन में से एक को छोड़ देने से बाक़ी दो पीड़ित होते हैं।[26]

कौटिल्य के बारे में अनेक भ्रांतियाँ हैं। नेहरू जैसे आधुनिकों ने उनकी तुलना मेकियावेली से कर के इन्हें बढ़ावा दिया है। कहा जाता है कि कौटिल्य एकतंत्रीय प्रणाली के पक्षधर हैं। पर ... कौटिल्य प्रजा का हित करने वाली प्रणाली के पक्षधर हैं ... कौटिल्य ... जो व्यवस्था प्रस्तावित करते हैं, वह पूरी तरह एकतंत्रात्मक भी नहीं है। ... अमात्यपरिषद् द्वारा राजा को और राजा के द्वारा अमात्यपरिषद् को निरंकुश हो जाने से रोकने के लिए व्यवस्थाएँ हैं। ■

राजा को निरंकुश होने से रोकने के लिए कौटिल्य शास्त्र का अंकुश प्रस्तावित करते हैं। अंध या अनपढ़ राजा तथा अधीर हो कर भटके हुए राजा में कौन ज़्यादा ठीक है, इस सवाल पर अन्य आचार्यों के मतों का उल्लेख करते हुए कौटिल्य कहते हैं कि अनपढ़ को तो समझाया जा सकता है, पर जो शास्त्र पढ़ कर शास्त्र से विचलित हो गया या बहक गया है, वह निरंकुश हो जाता है, उसे रोकना कठिन होता है।[27]

कौटिल्य की स्वप्न-दृष्टि उनकी देश तथा चक्रवर्ती क्षेत्र की अवधारणा में प्रतिफलित हुई है। यह धरती ही देश है, इसमें हिमालय से लगा कर समुद्र तक का भाग चक्रवर्ती क्षेत्र है।[28]

कौटिल्य के बारे में अनेक भ्रांतियाँ हैं। नेहरू जैसे आधुनिकों ने उनकी तुलना मेकियावेली से कर के इन को बढ़ावा दिया है। कहा जाता है कि कौटिल्य एकतंत्रीय प्रणाली के पक्षधर हैं। पर यह पूरा सत्य नहीं है। कौटिल्य प्रजा का हित करने वाली प्रणाली के पक्षधर हैं, उन के समय में जो गणतंत्र थे, उनकी विफलताओं को देखते हुए कौटिल्य ने जिस शासनप्रणाली की परिकल्पना की वह उस समय राष्ट्र के उन्नयन और बाहर से हो रहे हमलावरों को नाकाम करने के लिए अपेक्षित थी। भीष्म अपने राजधर्मनिरूपण में गणतंत्रों पर विस्तार से विचार करते हैं, उनके क्षय के कारण भी बताते हैं।[29]

कौटिल्य इस परिप्रेक्ष्य में जो व्यवस्था प्रस्तावित करते हैं, वह पूरी तरह एकतंत्रात्मक भी नहीं है। उसमें अमात्यपरिषद् द्वारा राजा को और राजा के द्वारा अमात्यपरिषद् को निरंकुश हो जाने से रोकने के लिए व्यवस्थाएँ हैं। कौटिल्य ने इसके लिए मर्यादास्थापन की दृष्टि रखी है। पहले अधिकरण के सातवें अध्याय में कौटिल्य कहते हैं, 'राजा को चाहिए कि वह मर्यादा को बनाए रखे और मर्यादा की दृष्टि से ऐसे आचार्यों व अमात्यों को नियुक्त करे, जो उसे संकट में चेताते रहे और आवश्यकता होने

---

[25] विनयमूलोदण्डः प्राणभृतां योगक्षेमावहः। ...विद्याविनयहेतुरिन्द्रियजयः। कामक्रोधलोभमानमदहर्षत्यागात् कार्यः। कर्णत्वगक्षिजिह्वाघ्राणेन्द्रियाणां शब्स्पर्शरूपररसगन्धेष्वविप्रपतिपत्तिरिन्द्रियदजयः। शास्त्रार्थानुष्ठानं वा। कृत्स्नं हि शास्त्रमिदमिन्द्रियजयः। : 37.

[26] धर्मार्थावविरोधेन कामं सेवेत, न निस्सुखः स्यात्। समं वा त्रिवर्गमन्योन्यानुबन्धम्। एको ह्यत्यासेवितो धर्मार्थकामानामात्मानमितरौ च पीडयति। वही, भाग 1, : 39.

[27] वही,भाग 3, : 14.

[28] वही, भाग 3, : 45.

[29] *महाभारत,* शांतिपर्व, रागजधर्मानुशासनपर्व, 107.8-29.

04_radhaballav_Layout 1 6/3/2015 4:36 PM Page 82

पर रोक ले। वे उस पर छायानालिकाप्रतोद की तरह चाबुक चला सके।'[30] टीकाकारों में यहाँ मर्यादा के दो अर्थ किये हैं : सीमा और सम्मान। राजा और अमात्य दोनों अपनी अपनी सीमा में रहें और एक दूसरे का सम्मान भी करें। कौटिल्य ने यहाँ छायानालिकाप्रतोद शब्द का प्रयोग किया है। यह एक समय-सूचक यंत्र है। प्रतोद चाबुक को कहते हैं।

धर्मशास्त्रकारों में सबसे उदार और समाजमूलक विचारकों में एक याज्ञवल्क्य हैं। याज्ञवल्क्य कौटिल्य के सबसे निकट हैं। मनुष्यता की रक्षा के भाव से ये दोनों दण्ड-विधान की नियमावली प्रस्तावित करते हैं। इसमें सताए जाने वाले लोगों और स्त्रियों, बच्चों और बूढ़ों की भी परवाह है। याज्ञवल्क्य ने (2.218) दण्ड-विधान में किसी के ऊपर पेशाब, गोबर आदि फेंकने के लिए छह पण का जुर्माना निर्धारित किया है। कौटिल्य में इस तरह के विधान और भी स्पष्ट हैं। वे कहते हैं कि किसी के ऊपर थूकने पर छह पण और छर्दि, मूत्र, पुरीष (विष्ठा) आदि फेंकने पर बारह पण जुर्माना होगा।

कौटिल्य का *अर्थशास्त्र* राम, भीष्म, बृहस्पति, शुक्र आदि द्वारा सूचित या निरूपित *अर्थशास्त्रों* और शासन-प्रबंधविज्ञानों की तुलना में कहीं अधिक प्रजातांत्रिक है। उसमें विकल्पों को बने रहने देने के लिए अवकाश है। अपना मत देने के लिए उसके पहले किये गये अनेक विचार और विकल्प उद्धृत करते हैं। अमात्य किसे बनाया जाए, तथा मंत्री परिषद् में कुल कितने सदस्य रहें— इसे लेकर विशालाक्ष, पराशर, पिशुन, कौणपदंत, वातव्याधि, बाहुदंतीपुत्र तथा बार्हस्पत्य, औशनस परम्परा के मत उद्धृत कर के अपना मंतव्य देते हैं कि ये सभी अपनी अपनी जगह ठीक हैं। कार्यसामर्थ्य और व पुरुषसामर्थ्य के आधार पर राजा निर्णय ले।[31]

कौटिल्य ने वंचना व भेदनीति के प्रपंचों का विस्तार बताया है, पर राजा को सावधान करने के लिए। मंत्री राजपुत्रों को भी उकसा सकते हैं। वातव्याधि के इस मत पर कि राजकुमारों को सुखोपभोग में लगा दिया जाए, ताकि वे राजद्रोह की बात न सोच सकें— कौटिल्य कहते हैं कि यह तो जीवित मरण के समान है। इससे राजकुल घुन लगे काठ की तरह हो जाता है, और अंततः टूट जाता है।[32]

लोकोपकार का शास्त्र

कौटिल्य कहते हैं कि राजा कार्यार्थियों से खुल कर मिले। वे उसके दरवाज़े पर ही खड़े न रह जाएँ। यदि राजा प्रजा के लोगों के लिए सुलभ नहीं रहेगा, तो कार्य और अकार्य में विपर्यास होगा। उससे प्रजा में विद्रोह हो सकता है या राज्य शत्रु के अधीन जा सकता है। इसलिए राजादेवकार्य, पितृ-कार्य, संन्यासियों, पुरोहितों के कार्य पशुओं के काम, पुण्यसंबंधी काम, बच्चे, बूढ़े, बीमार, विपत्ति में पड़े लोगों, तथा अनाथ व स्त्रियों के कामों का विशेष ध्यान रखे।[33] इस सारे प्रसंग के निष्कर्ष में कौटिल्य कहते हैं कि राजा का अपना कोई सुख नहीं होता। उसका सुख तो प्रजा के सुख में ही है। उसका हित भी प्रजाहित में ही है। उसका अपना कोई प्रिय भी नहीं होता। प्रजा को जो प्रिय है, वही उसका भी प्रिय है।

प्रजासुखे सुखं राज्ञः प्रजानां च हिते हितम्।
नात्मप्रियं हितं राज्ञः प्रजानां तु प्रियं हितम्।

---

[30] मर्यादां स्थापयेदाचार्यानमात्यान् वा य एनमपायस्थानेभ्यो वारयेयुः, छायानालिकाप्रतोदेन वा रहसि प्रमाद्यन्तमभितुदेयुः। (वही, भाग 1, : 40).

[31] वही, भाग-1, : 43, 76.

[32] वही, भाग-1, : 86.

[33] उपस्थानगतः कार्यार्थिनामद्वारासङ्गं कारयेत, दुर्दर्शो हि राजा कार्याकार्यविपर्याससमासन्नैः कार्यते। तेन प्रकृतिकोपमरिवशं वा गच्छेत। तस्माद् देवताश्रमपाषण्डश्रोत्रियपशुपुण्यस्थानानां बालवृद्धव्याधितव्यसन्यनाथानां स्त्रीणां च क्रमेण कार्याणि पश्येत कार्यगौरवादात्ययिकवशेन वा। वही, 1.19 : 96.

04_radhaballav_Layout 1 6/3/2015 4:36 PM Page 83

उनके विशाल ग्रंथ में प्रतिपादित अनेक व्यवस्थाएँ इसी प्रजासुख और प्रजाहित के लिए निर्मित कार्यावली की रूपरेखा प्रस्तुत करती हैं। उन्होंने राजा को निर्देश दिया है कि सौ से पाँच सौ तक घर वाले गाँव, जिनमें शूद्र जन खेती करें, कोस या दो दो कोस की दूरी पर इस तरह बसाए जाएँ कि वे एक दूसरे की रक्षा कर सकें। गाँवों की सीमाएँ सुरक्षित करने के लिए इन्हें बसाते समय नदी, पहाड़, जंगल, बाँध आदि की स्थिति का ध्यान रखना चाहिए तथा सिंचाई के लिए सेतु बनाना चाहिए।[34] कौटिल्य दो तरह के सेतु बनाए जाने का निर्देश देते हैं— सहोदक व आहार्योदक। सहोदक सेतु वह है जिसमें नदी का प्रवाह बाँधा जाए आहार्योदक जिसमें पानी किसी स्रोत से लाया जाए। इनके साथ प्रजाजनों को प्रोत्साहित करे कि वे स्वयं सेतु बनवाएँ, वृक्ष लगवाएँ, यदि उन्होंने उस पर व्यय किया है, तो राजा उसमें अपना अंशदान करे।

यहाँ फिर वे अनाथ बच्चों, बूढों और बीमार लोगों के पोषण की व्यवस्था करने का निर्देश देते हैं। यदि स्त्री अनाथ है और गर्भवती है तो उसका पोषण राजा करेगा, उसकी संतानों का भी।[35]

कौटिल्य तथा कामसूत्रकार वात्स्यायन तीन पुरुषार्थों की बात करते हैं। चौथे पुरुषार्थ मोक्ष और चौथे आश्रम संन्यास के लिए उनके शास्त्र में जगह नहीं है। यद्यपि संन्यास आश्रम की उनके समय तक वर्णाश्रम व्यवस्था में पक्की जगह बना चुका है। गुप्तचरों की व्यवस्था या अन्य प्रसंगों में कौटिल्य कई तरह के संन्यासियों का उल्लेख करते हैं। वे यह भी जानते हैं कि घर-गृहस्थी की ज़िम्मेदारियों से भाग कर भिक्षा में पकी पकाई खा कर चैन से रहने के लिए संन्यासी होने वाले भी कई लोग हैं। वे अपने परिवार की व्यवस्था किये बिना संन्यास लेने वाले के लिए कठोर दण्ड की व्यवस्था करते हैं।[36] राजा को चाहिए कि दण्ड, विष्टि (बेगार) व कर (टैक्स) के कारण कृषि की क्षति होने से रोके, इसी तरह पशुधन की भी वह रक्षा करे।[37]

प्रजाहितपरक व्यवस्थाओं में विशेष महत्त्वपूर्ण है चरागाह बनाने का व्यवस्था। जो ज़मीन खेती के योग्य न हो तथा जिसमें चोर आदि का डर हो, वहाँ चरागाह विकसित करने का निर्देश देते हैं। निर्जल प्रदेशों में कुएँ ख़ुदवाने, बाँध, प्याऊ आदि की व्यवस्था करने का भी।[38]

'भूमिच्छिद्रविधान' नाम से विशद प्रकरण इसमें राजा के विहार के लिए मृगवन भी बनाने का निर्देश है। कौटिल्य और उनका अनुगमन करते हुए वात्स्यायन भी स्त्रियों को रोज़गार देने की हिमायती हैं। ईसापूर्व के भारत में स्त्रियों के लिए जिस तरह के काम-धंधे दिये जा सकते हैं, उनकी व्यवस्था के लिए ये दोनों आग्रह भी करते हैं।

'अध्यक्षप्रचार' के दूसरे अधिकरण के 23वें अध्याय में कौटिल्य कहते हैं सूत्राध्यक्ष सूत्र, वर्म (पेड़ों की छाल), वस्त्र तथा रस्सी के सामान की ख़रीद-फ़रोख़्त तो पुरुषों के द्वारा कराए, पर ऊन, वल्कल, कपास, रूई, सन, रेशम इनकी बुनाई, सिलाई आदि के कामों में विधवाओं, विकलांग महिलाओं, लड़कियों, संन्यासिनियों व दण्ड का प्रतीकार करने वाली स्त्रियों को लगाया जाए। गणिकाओं की माताओं, बूढ़ी दासियों तथा उपस्थान (सेवाकार्य) से निवृत्त हुई देवदासियों से भी ये काम कराए जा सकते हैं। कताई आदि के लिए शासन की ओर से सूत्रशाला चलाई जानी चाहिए— यह भी इस प्रकरण से स्पष्ट होता है।

---

[34] वही, 2.19, : 109.

[35] बालवृद्धव्याधितव्यसन्यनाथांश्च राजा बिभ्रयात्, स्त्रियमप्रजातां प्रजातायाश्च पुत्रान्। वही, 2.19 : 113.

[36] वही, 2.19, : 113.

[37] दण्डविष्टिकराबाधै रक्षेदुपहतां कृषिम्।
स्तेनव्यालविषग्राहैर्व्याधिभिश्च पशपव्रजान्।। *अर्थशास्त्र*, 1.2.1, : 115.

[38] वही, भाग 1, : 342.

04_radhaballav_Layout 1 6/3/2015 4:36 PM Page 84

आगे कौटिल्य यह भी कहते हैं इस तरह की स्त्रियाँ व कन्याएँ अगर अपनी रोज़ी-रोटी स्वयं चलाती हैं, तो उनसे प्रेम और सम्मान के साथ काम कराए।[39] उनके अनुसार रात को कताई आदि का काम कर के भोर होते ही ऐसी महिलाएँ काता हुआ सूत आदि ले कर सूत्रशाला में पहुँचे, तो उन्हें उनका मेहनताना ठीक से दे देना चाहिए। इस समय कामगार स्त्री के साथ यदि कोई पुरुष इधर-उधर की बातें करें, तो उसे उत्तम साहस (अपराधी को दिया जाने वाला सबसे कठोर) दण्ड दिया जाए। उस स्त्री के वेतन देने में देरी करने वाले या काम न करने पर भी उससे उत्कोच (रिश्वत) ले कर वेतन देने वाले अधिकारी को मध्यम साहसदण्ड देना चाहिए। इसके मुक़ाबले वेतन ले कर भी काम न करने वाली स्त्री के लिए दण्ड कठोर का प्रावधान है : मध्यमा और अँगूठे का कर्तन।

सूत्राध्यक्ष को चाहिए कि वह चर्मकारों व रस्सी बँटने वालों से अच्छे संबंध रखे, उनसे घुलमिल कर रहे। सीताध्यक्ष को कृषितंत्र, शुल्ब तथा वृक्षायुर्वेद का विशेषज्ञ होना चाहिए।[40]

सूनाध्यक्ष (कसाईख़ानों के अधीक्षक) के लिए कौटिल्य का सबसे पहला निर्देश यह है कि वह अभयारण्यों में बसे पशुओं, पक्षियों व मत्स्यों को पकड़ने, मारने या उनकी हिंसा करने वालों को कड़ा दण्ड दे। सदैव अवध्य पक्षियों की लम्बी सूची उन्होंने दी है तथा अवध्य प्राणियों का भी उल्लेख कौटिल्य करते हैं।

गणिकाध्यक्ष का काम गणिकाओं से शुल्क वसूल करना ही नहीं, गणिका के साथ ज़बरदस्ती या मारपीट करने वाले पुरुष के लिए दण्ड देना भी है।[41]

कौटिल्य के मुताबिक़ पति के लम्बे प्रवास पर चले गये जाने पर स्त्री अन्य से संबंध कर सकती है। अविवाहित देवर को प्राथमिकता है। वैवाहिक संबंधों में मोक्ष (तलाक़) की व्यवस्था कौटिल्य करते हैं। नीच काम करने वाले, लम्बे समय के लिय प्रवास पर चले गये, राजद्रोही, हत्यारे या नपुंसक पति को स्त्री छोड़ सकती है।[42] पति-पत्नी में एक दूसरे से न बनती हो, तो धर्मविवाहेतर विवाहों में मोक्ष या तलाक़ हो सकता है। अपकार करने वाली स्त्री से उसका पति मोक्ष ले सकता है, पर स्त्री के लिए इन व्यवस्थाओं में छूट कम है।[43]

छोटे पशुओं को डण्डे आदि से मार कर कष्ट पहुँचाने वाले को एक पण या दो पण तक के दण्ड की व्यवस्था कौटिल्य देते हैं। पर ऐसी मार से पशु के ख़ून निकल आये, तो दण्ड दो गुना कर देते हैं। गाय, भैंस आदि बड़े पशुओं को डण्डे आदि से मार कर कष्ट पहुँचाने वाले को इससे भी दूने दण्ड की व्यवस्था देते हैं ,और उसके साथ इन पशुओं के इलाज के व्यय की भरपाई भी अपराधी से कराए जाने का निर्देश देते हैं।

नगर के उपवन में फूल तथा फल वाले और छायादार पेड़ों के पत्ते तोड़ने पर छह पण, उनकी टहनी काटने पर बारह पण, शाखा काटने पर चौबीस पण और तना काटने पर साहसदण्ड की व्यवस्था करते हैं। जड़ समेत पेड़ उखाड़ने पर मध्यम दण्ड। इसी तरह लताओं या मंदिर, आश्रम अथवा श्मशान के पेड़ों को नुक़सान पहुँचाने पर भी दण्ड की व्यवस्थाएँ हैं। सिवान या चैत्यों में लगे पेड़ों की क्षति

---

[39] याश्चानिष्कासिन्यः प्रोषितविधवाः न्यङ्गाः कन्यका वात्मानं बिभृयुस्ताः स्वदासीभिरनुसार्य सोपग्रहं कर्म कारयितव्याः। वही, : 280.

[40] वही, : 283.

[41] वही, : 303.

[42] नीचत्वं परदेशं वा प्रस्थितो राजकिल्बिषी।
प्राणाभिहन्ता पतितस्त्याज्यः क्लीबोऽपि वा पतिः।। वही, भाग 2, : 18.

[43] वही, खण्ड 2, : 21.

04_radhaballav_Layout 1 6/3/2015 4:36 PM Page 85

के लिए दण्ड और भी दुगना है।[44] चोरों के साथ कोई निरपराध और सज्जन व्यक्ति ग़लती से धर लिया जाए, तो उसकी पहचान के तरीक़े कौटिल्य जिस तरह बताते हैं, उसमें लगता है उन्हें इस बात की बहुत चिंता है कि उनके दण्ड-विधान के नियम असहायों, कमज़ोरों व भोले भाले लोगों पर ही उलटे गाज न गिराएँ। अपराध कबुलवाने के लिए कौटिल्य ने उस तरह के अनेक तरीक़े बताए हैं, जो आज की पुलिस के थर्ड डिग्री मेथड में आते हैं।[45] वे उन स्थितियों का भी विश्लेषण करते हैं, जिनमें कोई मासूम आदमी चोरों के साथ या चोरी के अपराध में ग़लती से धर लिया जाने पर चोर न होते हुए भी डर के कारण घबराहट में चोरी क़बूल लेता है। *महाभारत* का दृष्टांत यहाँ वे देते हैं। राजपुरुष अर्थात् पुलिस के लोग मारेंगे— इस आशंका मे मांडव्य ऋषि ने झूठ बोल दिया कि हाँ, मैंने चोरी की है और राजा ने उन्हें सूली पर लटका दिया।

राजतंत्र में व्याप्त भ्रष्टाचार की अच्छी मीमांसा कौटिल्य ने की है। जैसे जीभ के अगले हिस्से पर रखे शहद या विष का स्वाद लिए बिना नहीं रहा जा सकता, उसी तरह राजा के अधिकारी हराम की कमाई न छुएँ यह हो नहीं सकता। जिस तरह पानी में तैरती मछलियों के बारे में यह नहीं कह जा सकता कि वे कब कैसे कितना जल पी जाती हैं, उसी तरह राज्य के कर्मचारियों के बारे में भी जानना असम्भव ही है कि वे कब किससे कितना धन वसूल कर लेंगे। ■

सश्रम कारावास का विधान कौटिल्य बताते हैं, पर गर्भिणी से या सद्य:प्रसूता स्त्री से एक महीने तक कारागार में श्रम न कराए जाने का नियम भी बनाते हैं। वे पुरुष क़ैदियों की तुलना में महिला क़ैदियों से आधा काम कराने की व्यवस्था भी देते हैं। (खण्ड 2, पृ. 155)

राजतंत्र में व्याप्त भ्रष्टाचार की अच्छी मीमांसा कौटिल्य ने की है। जैसे जीभ के अगले हिस्से पर रखे शहद या विष का स्वाद लिए बिना नहीं रहा जा सकता, उसी तरह राजा के अधिकारी हराम की कमाई न छुएँ यह हो नहीं सकता। जिस तरह पानी में तैरती मछलियों के बारे में यह नहीं कहा जा सकता कि वे कब कैसे कितना जल पी जाती हैं, उसी तरह राज्य के कर्मचारियों के बारे में भी जानना असम्भव ही है कि वे कब किससे कितना धन वसूल कर लेंगे। पर राजा को बराबर प्रयास करते रहना चाहिए कि उसके कर्मचारी घूस आदि के द्वारा अनुचित रूप से धन वसूल करने से विरत रहें, वे ऐसा करते हुए अति करने लगें, तो उन्हें काम से हटा दे, उनके काम बदल दे, जो धन उन्होंने ग़लत ढंग से कमाया है, उसे उनसे उगलवा ले।[46]

---

[44] वही, 3.19, : 109.

[45] वही, खण्ड 2, : 156.

[46] यथा ह्यनास्वादयितुं न शक्यं जिह्वातलस्थं मधु वा विषं वा
अर्थस्तथा ह्यर्थचरेण राज्ञ: स्वल्पोऽप्यनास्वादयितुं न शक्यम्।।
मत्स्या यथान्त:सलिले तरन्तो ज्ञातुं न शक्या: सलिलं पिबन्त:
युक्तास्तथा कार्यविधौ नियुक्ता ज्ञातुं न शक्या धनमाददाना:
अपि शक्या गतिर्ज्ञातुं पततां खे पतत्रिणाम्
न तु प्रच्छन्नभावानां युक्तानांचरतां गति:
आस्रावयेच्चोपचितान् विपर्यस्येच्च कर्मसु
यथा न भक्षयन्त्यर्थं भक्षितं निर्वमन्ति वा।। वही 2.9, : 165 .

04_radhaballav_Layout 1 6/3/2015 4:36 PM Page 86

कौटिल्य हम से दूर

कौटिल्य कई मामलों में हम से बहुत दूर हैं। वे चातुर्वर्ण्य या वर्णव्यवस्था के प्रबल पक्षधर हैं। फिर उनकी व्यवस्था ऊँच-नीच के भेदभाव पर टिके समाज के लिए है। पुरोहित और मंत्री से लगा कर दिहाड़ी पर काम करने वाले मजदूरों तक के जो वेतन उन्होंने बताए हैं, उससे यह बात अच्छी तरह समझी जा सकती है। ऋत्विक, आचार्य, मंत्री, पुरोहित, सेनापति, युवराज, राजमाता, राजमहिषी उनके वेतन 48 हज़ार पण प्रतिमाह है। द्वारपाल आदि का 24 हज़ार, श्रेणीमुख्य (हवलदार) या हाथी, घोड़े के मुख्य का आठ हज़ार, इनके अध्यक्ष (सुपरवाइजर) का चार हज़ार, रथचर्या के शिक्षक, चिकित्सक आदि का दो हज़ार, निमित्त, मुहूर्त आदि बताने वाले का एक हज़ार, कारीगर, पैदल सिपाही, लेखक (नक़लनवीस) आदि का मात्र पाँच सौ है। जब कि कुशीलवों (गायक, वादक, नर्तक आदि) का केवल ढाई सौ। बढई आदि का 120 पण, नौकर, सेवक साठ, इस तरह घटाते हुए सबसे निचले वर्ग के लोगों का वेतन सबसे ऊपर वाले से हज़ार गुना कम हो जाता है।

कौटिल्य की दृष्टि विवाह के रिश्ते को पवित्र बनाए रखने पर है। स्त्री मनमर्जी से बाहर घूमती रहे, तो छह पण का दण्ड है। रोकने पर भी बाहर जाती रहे, तो बारह पण। किसी पड़ोसी के घर चली जाए, तो छह पण। वह वहीं जा कर पड़ी रह जाए, तो चौबीस पण। पति के लिए भी किसी परस्त्री को घर ले आने पर कठोर दण्ड है। पर स्त्री स्वयं चली आये तो पति निरपराध माना जाएगा। पति की रज़ामंदी के बिना स्त्री का अपने सगे संबंधियों के यहाँ चले जाना भी दण्डनीय है। पर उसके मायके में कोई विपदा आ पड़े, सगों में से कोई बीमार हो जाए, बच्चा होने वाला हो तो मायके जाने पर कोई पाबंदी नहीं है।[47]

वैवाहिक संबंधों में नैतिकता व मानमर्यादा पर कौटिल्य के यहाँ बहुत ज़ोर है। इस मामले में उनके द्वारा बनाए गये विधान शरीयत के क़ानूनों की तरह कठोर हैं। वे बुआ, मौसी, मामी, गुरु-पत्नी, बहू, बेटी, बहिन इन के साथ अनुचित कर्म करने वाले पुरुष का लिंग काट कर वध करने का नियम बताते हैं, और जिस स्त्री के साथ ऐसे पुरुष के संबंध बने, वह भी उस पुरुष को चाहती हो, तो उसे भी यही दण्ड दिया जाए। (*श्रीमूल* टीका के अनुसार पुरुष के लिंगच्छेद का अर्थ है शिश्न और अंडकोष दोनों काट दिये जाना, और स्त्री के लिए इसका अर्थ स्तन व भग काट दिया जाना। (पृ. 181) दास परिचारक आदि से संबंध होने पर या श्वपाकी (चांडाली) या श्वपाक से संबंध होने पर भी पुरुष और स्त्री दोनों के लिए इसी तरह के दण्ड की व्यवस्था है। जिस स्त्री का पति विदेश गया है, वह कोई ऐसा वैसा काम न करे, इसका ध्यान उसके पति के भाई-बंधु या सेवक रखेंगे। ऐसी स्त्री को चाहिए कि वह पति की प्रतीक्षा करे, यदि उसने कुछ व्यभिचार कर ही डाला है, तो पति के आने पर यह बात उसे बता दी जाए, पति यदि स्त्री को क्षमा कर दे, तो राजा दोनों को छोड़ दे। यदि पति क्षमा नहीं करता है, तो स्त्री के तो नाक और कान कटवा दिये जाएँ, और उसके प्रेमी को प्राणदण्ड दिया जाए। यदि राजा के सिपाही या चौकीदार ऐसा स्त्री के जार (यार) को यह तो चोरी करने के लिए घुसा था— यह कह कर बचाने का प्रयास करते हुए पकड़ कर ले जाएँ, तो उनके लिए पाँच सौ पण का दण्ड होगा, यदि वे जार से रिश्वत ले कर ऐसा करते हुए पकड़े जाएँ, तो उससे दूना।[48] पर परस्त्री के साथ रिश्ते जोड़ने वाले पुरुष के लिए कौटिल्य के मन में कुछ करुणा है। वे कहते हैं कि शत्रुओं या आटविकों (दस्युओं) के द्वारा हरी गयी, नदी में बाढ़ वग़ैरह में बह गयी या अकाल में रिश्तेदारों के द्वारा छोड़ दी गयी स्त्री को कोई आदमी बचा लेता है और आसरा देता है , ऐसी स्थिति में दोनों में बातचीत हो जाती है, और वह पुरुष उस स्त्री के साथ सम्भोग करना चाहे, तो कर ले। ऐसी स्थिति में दोनों के लिए दण्ड नहीं है— यह यहाँ अच्छी बात है। वह स्त्री अपने संकटहारक से

---

[47] वही, : 25-26.

[48] वही, खण्ड 2, 4.12, : 175.

04_radhaballav_Layout 1 6/3/2015 4:36 PM Page 87

ऊँची जाति की हो और उसके बंधुजन या पति उसे लेने के लिए आ जाएँ, तो उसे उसके ऊपर हुआ ख़र्च ले कर उनको सौंप दे। यदि वह स्त्री निचली जाति की है, पर इस संकटहारक के साथ अब नहीं रहना चाहती, तब उसे उसके बंधुजनों को सौंप दे।[49]

मज़दूर पगार ले ले और काम न करे, तो बारह पण दण्ड, पर बीमार या विपत्तिग्रस्त होने पर छूट है (खण्ड 2, पृ. 86)। साथ ही जब यह क़रार हो जाए कि मैं तुम से ही काम कराऊँगा और मैं तुम्हारे ही लिए काम करूँगा, तो काम न कराने वाला मालिक और काम न करने वाला मज़दूर दोनों के लिए बराबर सज़ा है। कौटिल्य यहाँ काम नहीं, तो वेतन नहीं के सिद्धांत का कठोरता से समर्थन करते हैं। वाक्परुष्य (कठोरवचन कहना) एक अपराध है। इस सीमा तक कि किसी नेत्रहीन व्यक्ति से व्यंग्य या उपहास में यों बोलना कि आप के तो कितनी सुंदर आँखें हैं—इस पर बारह पण का दण्ड है। तुम्हारे हाथ पाँव तोड़ दूँगा— ऐसी धमकी यदि कोई ऐसा व्यक्ति दे, जो हाथ पाँव तोड़ देने का ताक़त स्वयं रखता ही न हो, तब तो बारह पण एक बार का ही दण्ड है। पर यदि कोई ऐसा व्यक्ति यह धमकी दे, तो सचमुच हाथ-पाँव तोड़ देने की ताक़त भी रखता हो, तो जीवन भर बारह पण वह हर साल चुकाता रहेगा।[50] पड़ोसी कष्टदायक वस्तुएँ बगल के घर में फेंके, तो बारह पण दण्ड का विधान करते हैं, ऐसे कृत्य से प्राणांतक कष्ट हो तो उससे दुगुने दण्ड का। अपराधविज्ञान व शवपरीक्षा के प्रकरण भी *अर्थशास्त्र* में हैं।[51] इन पर कौटिल्य का विवेचन आज के विज्ञान की तुलना में बहुत पिछड़ा लग सकता है। *अर्थशास्त्र* में प्रशासन संबंधी लगभग एक हज़ार तकनीकी शब्द हैं, जो कई शताब्दियों से व्यवहार के बाहर हो गये और उनके आशय और निहितार्थ भी अब जानना कठिन है। उदाहरण के लिए शुल्क या टैक्स के पचीसों प्रकार कौटिल्य ने बताए हैं, जो उनके समय में राजा के अधिकारी बखूबी जानते थे, और जिन्हें कौटिल्य को परिभाषित करने की आवश्यकता ही नहीं थी— जैसे परिघ, रूपिक, षड्भाग, सेनाभक्त, बलि, कार, उत्संग, पार्श्व, कौष्ठेयक, गुल्मदेय, तारदेय, वर्तनी, अतिवाहिक, शुल्क, क्लृप्त। ये सब अलग अलग तरह के टैक्स हैं।[52]

कौटिल्य कई मामलों में हम से बहुत दूर हैं। वे चातुर्वर्ण्य के प्रबल पक्षधर हैं। फिर उनकी व्यवस्था ऊँच-नीच के भेदभाव पर टिके समाज के लिए है। पुरोहित और मंत्री से लगा कर दिहाड़ी पर काम करने वाले मजदूरों तक के जो वेतन उन्होंने बताए हैं, उसे यह बात अच्छी तरह समझी जा सकती है। ... कौटिल्य की दृष्टि विवाह के रिश्ते को पवित्र बनाए रखने पर है। ... स्त्रियों, अशक्त जनों तथा मासूम प्राणियों के लिए चाणक्य के अनेक विधान उन पर अत्याचार करने वालों के लिए कठोर हैं। उन विधानों के गठन में कौटिल्य की करुणा झलकती है। ■

अंत में : यदि कौटिल्य आज होते तो क्या करते?

दूरदर्शन के किसी चैनल पर एक दारुण दृश्य बार-बार दिखाया जा रहा था। किसी सार्वजनिक पार्क में एक पालतू बिगड़ैल और विकराल कुत्ता पाँच साल की एक बच्ची को टाँग में दबोच कर घसीटता ले जा रहा है। बच्ची चीखती है, उसका दस बारह साल का भाई दौड़ कर उसे किसी तरह कुत्ते के

---

[49] वही, 4.12, खण्ड 2, : 175.

[50] वही, खण्ड 2, : 10-105.

[51] वही, 4.6,7. : 143-52.

[52] विवरण के लिए देखें देवीदत्त शर्मा का लेख, 'टर्मिनोलॅजीकल आस्पेक्ट्स ऑफ़ कौटिल्याज़ *अर्थशास्त्र* ', *अर्थशास्त्र इन मॉडर्न वर्ल्ड*, : 17-18.

04_radhaballav_Layout 1 6/3/2015 4:36 PM Page 88

जबड़े से खींच कर उठा कर भागता है। कुत्ता पलट कर दौड़ कर फिर से बच्ची को टाँग पर दबोच कर गिरा देता है। उसका भाई फिर उसे छुड़ाता है। इस प्रक्रिया का बार-बार रिपीट शो चलता है। अंततः बगल के मकान से उस बच्ची की माँ चिल्लाती हुई आती है और रोती हुई अपने दोनों बच्चों को ले जाती है। कौटिल्य होते, तो सबसे पहले उस आदमी को सूली पर टाँग देने की सिफ़ारिश करते, जो बजाय इस बच्ची की मदद करने के इस सारे दृश्य की शूटिंग करने में लगा रहा। वे शायद उस पड़ोसी को तो कुत्तों से ही नोचवा कर मार देने की सज़ा भी दे डालते, जिसने अपना खूँखार कुत्ता इस तरह पब्लिक पार्क में छोड़ दिया।

यह कहा जा सकता है कि कौटिल्य अब अप्रासंगिक हैं, क्योंकि मौजूदा लोकतंत्र में दोनों की सज़ाएँ अवैध और अमानवीय कही जाएगीं और हमारे लिए लोकतंत्र ही सर्वोत्तम विकल्प है, जो कि सही बात भी है। पर यहाँ यह भी जोड़ना ज़रूरी है कि हमारे मौजूदा लोकतंत्र में एक बच्ची को कुत्ते के द्वारा भभोड़े जाने की दृश्य को फ़िल्माने वाले पत्रकार और कुत्ते के मालिक को सज़ा दिया जाना भी मुमकिन नहीं है। मुमकिन वही था जो दूरदर्शन पर उक्त दृश्य का दोहन कर करके दिखाने के बाद बताया गया। बच्ची की माँ ने रोते हुए कहा कि बच्ची ज़िंदा बच गयी। यही क्या कम है, और वे पहले भी कुत्ते के मालिक से कुत्ते को बाँध कर रखने का अनुरोध करती रही हैं, अब फिर करेंगी।

कौटिल्य चाणक्य के बारे में यह बहुप्रचारित (पर ग़लत) धारणा यह भी है कि वे कठोर तथा अमानवीय दण्ड-विधान के पक्षधर हैं, जिसमें दया, ममता और करुणा के मूल्य ग़ायब हैं। शायद औपनिवेशिक दौर ने इस तरह की मान्यता को पोसा है। विशाखदत्त ने छठी सातवीं शताब्दी में चाणक्य द्वारा नंदों के विनाश के बाद की कहानी को ले कर *मुद्राराक्षस* नाटक लिखा। यह एक महान नाटककार की कालजयी कृति है, और नाटककार विशाखदत्त कौटिलीय *अर्थशास्त्र* के भी मर्मज्ञ हैं। अंतिम दृश्य के पहले तक उनके नाटक को देखते या पढ़ते हुए ही लगता रहता है कि चाणक्य कितना निर्मम और क्रूर है— भले ही उसका उद्देश्य कितना ही महान हो। अंतिम दृश्य में हम चाणक्य के भीतर छिपी करुणा की अजस्र धार से सराबोर होते हैं। कौटिल्य के *अर्थशास्त्र* को सरसरी तौर पर पढ़ते हुए भी यह लग सकता है कि चाणक्य एक निर्मम व एकाधिकारवादी सत्ता तथा कठोर दण्डनीति के हिमायती हैं। पर यह सर्वथा सत्य तो नहीं ही है। स्त्रियों, अशक्त जनों तथा मासूम प्राणियों के लिए चाणक्य के अनेक विधान उन पर अत्याचार करने वालों के लिए कठोर हैं। उन विधानों के गठन में कौटिल्य की करुणा झलकती है।

कौटिल्य के दण्डविधान के प्रसंग में ग़ौर करने की एक बात है— अदंड्य को दण्ड देने वाले राजा के लिए भी दण्ड की व्यवस्था। राजा के लिए दण्ड उसके द्वारा दिये गये नाजायज़ दण्ड से तीस गुना होगा। पर राजा को सचमुच दण्ड दे दिया जाय, तब तो अराजकता हो जाएगी। फिर राजा की जगह इस दण्ड को भोगेगा कौन? कौटिल्य कहते हैं कि यह दण्ड वरुण के लिए पानी में डाले और उसके बाद बचा दण्ड ब्राह्मणों पर छोड़ दे।[53] आधुनिक व्याख्या में इसे राजा से हुई चूक पर लीपापोती कहा जा सकता है। कौटिल्य की दृष्टि में यह निरंकुश सत्ता को क़ाबू में रखने की रणनीति है, जिसमें धर्माधिकरण (कचहरी) राजा पर उसके व्यवहार के लिये मुक़द्दमा चलाने के लिए अधिकृत हो जाता है।

प्रयुक्त संस्करण

टी. गणपित शास्त्री (1984), *अर्थशास्त्र श्रीमूल टीका सहित तीन भाग,* (सम्पा.) टी. गणपति शास्त्री, भारतीय विद्या प्रकाशन, वाराणसी.

संदर्भ

राधावल्लभ त्रिपाठी (सम्पा.) (1997), *कौटिल्याज़ अर्थशास्त्र इन मॉडर्न वर्ल्ड,* प्रतिभा प्रकाशन, नयी दिल्ली.

---

[53] वही, खण्ड 2, 4.90, : 182-83.